REG. NO. RAJHIN /2002/14707

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

चोखी खेती

जुलाई, 2026

अति शुष्क पश्चिमी राजस्थान में सब्जी उत्पादन की संभावनाएँ

हरदत्त कस्वां[1], रमेश कुमार[2] और कमल कुमार बैरवा[2]

राजस्थान के पश्चिमी भाग, विशेषकर बीकानेर, जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, चूरू एवं श्रीगंगानगर क्षेत्र अति शुष्क एवं अर्ध–शुष्क जलवायु वाले क्षेत्र हैं। यहाँ वर्षा कम, तापमान अधिक तथा जल संसाधन सीमित होते हैं। इन परिस्थितियों के बावजूद सब्जी उत्पादन की व्यापक संभावनाएँ विद्यमान हैं। उन्नत किस्मों, आधुनिक कृषि तकनीकों तथा सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों के माध्यम से उत्पादन में वृद्धि हुई है। सब्जी उत्पादन किसानों की आय बढ़ाने, पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने तथा कृषि विविधीकरण को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

प्रमुख संभावनाएँ:–

अनुकूल जलवायु– अधिक धूप एवं कम आर्द्रता के कारण रोग एवं कीटों का प्रकोप अपेक्षाकृत कम रहता है। ऑफ–सीजन सब्जी उत्पादन की संभावना अधिक रहती है।

सूखा सहनशील फसलें– काचरी, टिंडा, कद्दू, करेला, मतीरा, सहजन, प्याज, लहसुन आदि फसलें शुष्क क्षेत्र में अच्छी उपज देती हैं। स्थानीय एवं उन्नत किस्मों का विकास क्षेत्र के लिए लाभकारी है।

सूक्ष्म सिंचाई का उपयोग– ड्रिप एवं स्प्रिंकलर सिंचाई से जल की बचत होती है। सीमित जल संसाधनों में भी अधिक क्षेत्र में खेती संभव है।

संरक्षित खेती– पॉलीहाउस, नेटहाउस एवं लो–टनल तकनीक द्वारा उच्च गुणवत्ता वाली सब्जियाँ उगाई जा सकती हैं। अधिक लाभ एवं वर्षभर उत्पादन संभव है।

जैविक खेती की संभावना– रासायनिक उपयोग कम होने से जैविक सब्जियों की मांग एवं मूल्य अधिक मिलता है।

प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन– सूखी सब्जियाँ, अचार, पाउडर एवं बीज उत्पादन से अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है।

अनुसंधान एवं संस्थागत सहयोग– स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर एवं आईसीएआर . केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा शुष्क क्षेत्र हेतु अनेक उन्नत सब्जी किस्मों एवं तकनीकों का विकास किया गया है।

फसलों एवं किस्मों का चयन–शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में सब्जी उत्पादन हेतु उपयुक्त फसल एवं किस्म का चयन अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र के लिए काचरी, टिंडा, मतीरा, खीरा, लौकी, करेला, टमाटर, मिर्च, प्याज, लहसुन तथा बैंगन जैसी फसलें सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं।

सारणी: 1 क्षेत्रीय जलवायु में उपयुक्त सब्जी फसलें।

सब्जी–वर्ग	फसलें
बेलवाली	काचरी, फूटककड़ी, काकड़िया मतीरा, टिण्डा, लौकी, कुन्दरु, नसदार तुरई, चिकनी तुरई, खरबूजा, करेला, कद्दू, ककोड़ा
फलवाली	बैंगन टमाटर, मिर्च
गोभीवर्गीय	पत्ता गोभी, गाँठ गोभी, फूल गोभी
फलीवाली	सेमफली, कुम्बाफली, चवलॉफली,
पत्तीवाली	मेथी, पालक, धनिया, सुवा, मोठफली, मटर, मिंडी
जड़वाली	मूली, गाजर
कंदवाली	प्याज लहसुन
बहुवर्षीय	सेहजन, ग्वारपाठा, कुमट, खींप, फोग, केर, लसौड़ा, मीठा–नीम, स्थानीय मशरुम

सारणी: 2 शुष्क क्षेत्रीय सब्जी किस्में

फसल	किस्म	संक्षिप्त विवरण
काकड़िया / फूटककड़ी	थार महक	अत्यंत शीघ्र पकने वाली किस्म, हल्के गुलाबी एवं मीठे गूदे वाली, 65 . 70 दिनों में तैयार होकर 225 . 248 क्विंटल हेक्टेयर उत्पादन देती है।
काचरी	थार कस्तूरी	अंडाकार फलों वाली शीघ्र तैयार होने वाली, 65 . 70 दिनों में तैयार होकर 95 . 100 क्विंटल हेक्टेयर उत्पादन देती है।
मतीरा	थार माणक	अत्यंत शीघ्र तैयार होने वाली मतीरा किस्म, पहली तुड़ाई 75 . 80 दिनों में तथा 285.2 क्विंटल हेक्टेयर उत्पादन क्षमता रखती है।
म्तीरा	थार मधुर	शीघ्र पकने वाली गहरे गुलाबी गूदे की किस्म, तथा 298.5 क्विंटल हेक्टेयर उत्पादन क्षमता वाली।
खेजड़ी	थार शोभा	शुष्क जलवायु के लिए उपयुक्त शीघ्र तैयार होने वाली किस्म, अधिक सांगरी एवं लूंग उत्पादन देती है।
खरबूजा	थार महिमा	शीघ्र पकने वाली खरबूजा किस्म, 193 .7 क्विंटल हेक्टेयर उत्पादन तथा फ्यूजेरियम विल्ट एवं फल मक्खी के प्रति मध्यम प्रतिरोधी।
तुरई	थार करणी	मोजेक रोग सहनशील एवं शीघ्र तुड़ाई वाली किस्म।
ककड़ी	थार शीतल	उच्च तापमान (42° तक) में भी फल सेट करने की क्षमता।
चिकनी तुरई	थार तपिश	बहु–तनाव एवं गर्मी सहनशील किस्म।
लौकी	थार समृद्धि	शुष्क क्षेत्र के लिए उपयुक्त किस्म।
सेहजन,	थार तेजस	सूखा–रोधी: इसे खास तौर पर बारिश पर निर्भर और कम बारिश वाले इलाकों में अच्छी तरह उगने के लिए विकसित किया गया है।

[1]आईसीएआर– केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर [2]विद्यावाचस्पति छात्र (उद्यान विभाग) स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय,बीकानेर, राजस्थान–334006 Email: kaswanhardat6@gmail.com

खेत की तैयारी

खेत की तैयारी एवं खाद–उर्वरक प्रबंधन सब्जी उत्पादन की सफलता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। वर्षाकालीन फसलों की बुवाई से पूर्व गर्मियों में गहरी जुताई, वर्षा जल संरक्षण एवं नमी संरक्षण के उपाय अपनाना लाभकारी होता है। जून माह में नालियों एवं पट्टियों की तैयारी कर गोबर की सड़ी हुई खाद मिलाने से भूमि की उर्वरता एवं जलधारण क्षमता में सुधार होता है। अंतिम सप्ताह में गहरी जुताई के बाद पाटा लगाकर खेत को बुवाई योग्य बनाया जाता है।

दीमक एवं भूमिगत कीड़ों के नियंत्रण के लिए डाइमेथोएट ३० % ईसी का प्रयोग अंतिम जुताई से पूर्व लाभकारी माना गया है। अनुसंधानों से यह पाया गया है कि जून के दूसरे पखवाड़े में पहली जुताई करने से जल संरक्षण अधिक होता है तथा खरपतवारों की संख्या कम रहती है। फसल कटाई के पश्चात खेत को खुला छोड़ने से वर्षा जल का अधिक संरचण होता है। ग्रीष्मकालीन बुवाई हेतु जनवरी–फरवरी में 2–3 बार जुताई कर खेत तैयार करना उपयुक्त है।

खाद –उर्वरक प्रबंधन तकनीक

मरुस्थलीय रेतीली मिट्टी वाले क्षेत्रों में संतुलित खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग भूमि की उर्वरा शक्ति बनाए रखने के लिए आवश्यक है। खेत तैयार करते समय गोबर की खाद 200–250 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अथवा भेड़–बकरी की मींगणी का प्रयोग करना चाहिए। वर्षा आधारित खेती में मानसून पूर्व वर्षा होने पर यूरिया का छिड़काव लाभकारी पाया गया है। सब्जी फसलों के लिए 80–100 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40–50 किलोग्राम फॉस्फोरस तथा 40 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर देना उपयुक्त है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत तैयारी के समय देनी चाहिए। बूंद–बूंद सिंचाई प्रणाली के साथ खाद एवं उर्वरकों का उपयोग अधिक लाभकारी रहता है। यूरिया का प्रयोग 3–4 भागों में विभाजित कर 10–15 दिन के अंतराल पर देने से पौधों की वद्धि एवं उत्पादन में वद्धि होती है।

फसल बुवाई तकनीक

फसल बुवाई तकनीक में क्षेत्रीय जलवायु, सिंचाई संसाधन तथा उपलब्ध संसाधनों के अनुसार उपयुक्त सब्जियों का चयन आवश्यक है। वर्षा, सर्दी तथा ग्रीष्मकालीन फसलों के लिए उचित समय पर बुवाई करने से गुणवत्तायुक्त एवं अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। वर्षा आधारित फसलों की बुवाई जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई तक करनी उपयुक्त मानी गई है। सिंचाई व्यवस्था होने पर बूंद–बूंद, फव्वारा तथा नाली विधि से वर्षभर उत्पादन किया जा सकता है।

बीज एवं बुवाई प्रबंधन

उच्च गुणवत्ता वाले प्रमाणित बीजों का चयन एवं बीज उपचार सफल उत्पादन के लिए आवश्यक है। बुवाई से पूर्व बीजों को 4–6 घंटे पानी में भिगोकर तथा कैप्टान, थाइरम या बैविस्टिन से उपचारित करना लाभकारी होता है। बायोफर्टिलाइजर एवं ट्राइकोडर्मा से भी बीज एवं नर्सरी पौधों का उपचार कर रोग नियंत्रण किया जाता है।

(अ) नाली विधि (Tunnel method)

नाली विधि सब्जी उत्पादन की एक महत्वपूर्ण तकनीक है। इस विधि में खेत में नालियाँ बनाकर इनमें खाद एवं उर्वरक मिलाकर बुवाई की जाती है। अंकुरण के बाद स्वस्थ पौधों को रखकर शेष पौधों को हटा दिया जाता है। इस विधि से खाद, सिंचाई जल एवं श्रम की बचत होती है तथा फसल प्रबंधन आसान होता है।

(ब) कुण्ड विधि

कुण्ड विधि असमतल एवं ढालू खेतों में वर्षा आधारित खेती के लिए उपयुक्त है। इस विधि में खेत में उचित दूरी पर कुण्ड बनाकर बुवाई की जाती है। प्रत्येक कुण्ड में 3–4 बीज बोए जाते हैं। अंकुरण के बाद स्वस्थ पौधों को रखकर शेष पौधों को हटा दिया जाता है। निराई–गुड़ाई एवं अंतरसस्य क्रियाएँ समय पर की जाती हैं। इस विधि से फसल प्रबंधन सरल होता है तथा जल संरक्षण में सहायता मिलती है। आवश्यकता अनुसार 1 या 2 जीवनदायी सिंचाई भी की जा सकती है।

(स) मिश्रित फसल विधि

वर्षा आधारित खेती में सब्जियों की मिश्रित बुवाई की जाती है। इस विधि से पौधों का समुचित विकास एवं भूमि का बेहतर उपयोग होता है। बेलवाली सब्जियों के लिए 5द्6 मीटर की दूरी पर कुण्ड बनाकर बुवाई की जाती है। अंकुरण के बाद स्वस्थ पौधों को रखकर शेष पौधों को हटाया जाता है। आवश्यकता अनुसार निराई–गुड़ाई एवं अंतरसस्य क्रियाएँ की जाती हैं। इस तकनीक से फसल प्रबंधन एवं फल उत्पादन आसान होता है। यह विधि उत्पादकता एवं फसल सुरक्षा में सहायक है।

जल प्रबंधन

जल प्रबंधन में सब्जी फसलों की सफलता के लिए उचित सिंचाई तकनीकों का उपयोग अत्यंत आवश्यक है। नाली विधि को जल बचत एवं उच्च उत्पादन के लिए सफल पाया गया है, क्योंकि इस विधि में सिंचाई के साथ बरसात का जल भी संचित किया जा सकता है। इस विधि में पौधों को प्रारंभिक अवस्था से फलन तक 6–7 दिन के अंतराल पर सिंचाई की जाती है। बूंद–बूंद सिंचाई (Drip technology) से पौधों को आवश्यक मात्रा में जल उपलब्ध होता है तथा जल बचत के साथ गुणवत्तायुक्त उत्पादन प्राप्त होता है। इस तकनीक में लेटरल पाइप तथा इन–लाइन ड्रिपर्स का उपयोग किया जाता है तथा 2–3 दिन के अंतराल पर सिंचाई लाभकारी रहती है।

फसल सुरक्षा प्रबंधन

फसल सुरक्षा प्रबंधन के अंतर्गत कीट एवं रोग नियंत्रण के लिए समय–समय पर उचित उपाय अपनाना आवश्यक है। नालियों एवं पॉलिथीन आवरण के उपयोग से फसल सुरक्षा में सहायता मिलती है। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए नीम के तेल का छिड़काव लाभकारी पाया गया है। रोग नियंत्रण हेतु बैविस्टिन, मेन्कोजेब तथा अनुशंसित दवाओं का उचित समय पर उपयोग कर अधिक उत्पादन एवं उच्च गुणवत्ता प्राप्त की जा सकती है।

कपास की प्रारंभिक अवस्था में कीट प्रबंधनः अधिक उत्पादन की आधारशिला

महाजन उमेश विशाल[1], डॉ. वीर सिंह[2], पूनम[3], प्रकाश कुमार[4]

कपास भारत की एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है, जिसे सफेद सोना भी कहा जाता है। देश के अनेक राज्यों जैसे राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा तथा मध्य प्रदेश में इसकी व्यापक खेती की जाती है। वस्त्र उद्योग की रीढ़ मानी जाने वाली इस फसल की उत्पादकता कई बार विभिन्न कीटों के प्रकोप के कारण प्रभावित होती है। विशेष रूप से फसल की प्रारंभिक अवस्था (बुवाई से 45–60 दिन तक) में कीटों का प्रबंधन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि इसी समय पौधों की स्थापना, वृद्धि एवं शाखाओं का विकास होता है। इस अवस्था में कीटों का प्रकोप पौधों की संख्या कम कर सकता है तथा उत्पादन क्षमता को स्थायी रूप से प्रभावित कर सकता है। कपास में प्रारंभिक अवस्था के दौरान मुख्य रूप से थ्रिप्स, माहू (एफिड), जेसिड, सफेद मक्खी तथा दीमक जैसे कीट नुकसान पहुंचाते हैं। समय पर पहचान एवं समेकित कीट प्रबंधन अपनाकर इनकी क्षति को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

प्रारंभिक अवस्था में प्रमुख कीट–

1. थ्रिप्स– थ्रिप्स कपास के नवजात पौधों पर आक्रमण करने वाला प्रमुख रस चूसक कीट है। इसके शिशु एवं वयस्क दोनों पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते हैं।

कीट की पहचान–

- वयस्क कीट बहुत छोटे (1–2 मिमी), पतले एवं हल्के पीले या भूरे रंग के होते हैं।
- इनके पंखों पर महीन झालर होती है।
- पत्तियों की निचली सतह पर तेजी से चलते हुए दिखाई देते हैं।

नुकसान के लक्षण–

- पत्तियों पर चांदी जैसी चमक दिखाई देती है।
- पत्तियां सिकुड़कर मुड़ जाती हैं।
- पौधों की वृद्धि रुक जाती है।
- गंभीर प्रकोप में पौधे कमजोर हो जाते हैं।

2. माहू–

कीट की पहचान–

- छोटे, मुलायम शरीर वाले हरे, काले या पीले रंग के कीट।
- समूहों में कोमल पत्तियों एवं टहनियों पर पाए जाते हैं।
- कुछ माहू पंखयुक्त तथा कुछ बिना पंख के होते हैं।

नुकसान के लक्षण–

- पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं।
- पौधों की वृद्धि प्रभावित होती है।
- पत्तियों पर चिपचिपा पदार्थ (हनीड्यू) दिखाई देता है।
- काली फफूंदी (सूटी मोल्ड) विकसित हो सकती है।

3. जेसिड–

राजस्थान में कपास की फसल का सबसे महत्वपूर्ण प्रारंभिक रस चूसक कीट जेसिड है।

कीट की पहचान–

- हल्के हरे रंग का पच्चर आकार का छोटा कीट।
- पत्तियों को छूने पर तेजी से उछलता है।
- सामान्यतः पत्तियों की निचली सतह पर पाया जाता है।

नुकसान के लक्षण–

- पत्तियों के किनारे पीले होकर लाल–भूरे रंग के हो जाते हैं।
- पत्तियां नीचे की ओर मुड़ जाती हैं।
- गंभीर प्रकोप में हॉपर बर्न लक्षण दिखाई देते हैं।
- पौधों की वृद्धि रुक जाती है।

4. सफेद मक्खी–

सफेद मक्खी कपास की एक अत्यंत महत्वपूर्ण कीट है, जो सीधे नुकसान पहुंचाने के साथ–साथ वायरस रोगों का प्रसार भी करती है।

कीट की पहचान–

- सफेद हल्का पीला रंग, आकार 2 मिलीमीटर, वयस्क पंख सहित, अवयस्क (निम्फ) पंख रहित।
- कीट जो पत्तियों की निचली सतह पर रहते हैं।
- पौधे को हिलाने पर सफेद झुंड के रूप में उड़ते हैं।
- शरीर पर सफेद मोमयुक्त परत होती है।

नुकसान के लक्षण–

- यह कीट विषाणु रोग (पत्ता मरोड़क) भी फैलाता है और इस कीट का सक्रिय काल (अगस्त आखिर से मध्य अक्टूबर)।
- पत्तियों की निचली सतह पर सफेद रंग के छोटे कीट दिखाई देते हैं।
- पौधों की वृद्धि रुक जाती है।
- हनीड्यू स्राव के कारण काली फफूंदी विकसित होती है।
- अधिक प्रकोप होने पर पत्तियाँ राख एवं तेलिया दिखाई देती है।

[1,3]विद्यावाचस्पति, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
[2]आचार्य, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
ईमेल– umeshmahajan1511@gmail.com मो.नं.– 8888430724

1. थ्रिप्स

2. माहू

3. जेसिड

4. सफेद मक्खी

समेकित कीट प्रबंधन (IPM)– कपास में केवल रासायनिक नियंत्रण पर निर्भर रहने के बजाय समेकित कीट प्रबंधन अपनाना चाहिए।

1. सांस्कृतिक प्रबंधन–

- खेत को खरपतवार मुक्त रखें।
- खेत में खरपतवार नियंत्रण करें।
- अत्यधिक नाइट्रोजन उर्वरकों के प्रयोग से बचें।
- नाइट्रोजन उर्वरकों का संतुलित उपयोग करें।
- जेसिड प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें।
- प्राकृतिक शत्रुओं जैसे लेडीबर्ड बीटल का संरक्षण करें।

2. यांत्रिक प्रबंधन–

- पीले चिपचिपे ट्रैप 10–12 प्रति हेक्टेयर लगाएं।
- नियमित रूप से फसल का निरीक्षण करें एवं संक्रमित पौधों/भागों को हटाएं (यदि आवश्यक हो)।

3. जैविक नियंत्रण– परभक्षी क्राइसोपा 12 हजार प्रति बीघा की दर से छोडे।

4. रासायनिक नियंत्रण– कीटनाशकों का प्रयोग केवल आर्थिक क्षति स्तर पार होने पर ही करें तथा एक ही समूह की दवाओं का बार–बार उपयोग न करें।

माहू, सफेद मक्खी एवं जेसिड आदि के लिए–

इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल	0.3. मिलीलीटर प्रति लीटर पानी
एसिटामिप्रीड 20 एसपी	0.4 ग्राम प्रति लीटर पानी
थायोक्लोप्रिड 240 एस.सी.	1.0 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी
थायामेथीकजाम 25 डब्ल्यू जी	0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी
डाईफेन्यूरान 50 डब्ल्यू पी	2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी

चूसक कीटों की प्रभावी निगरानी एवं प्रबंधन हेतु विशेष सुझाव–

- बुवाई के 10–15 दिन बाद से नियमित निरीक्षण शुरू करें।
- सप्ताह में कम से कम दो बार खेत का भ्रमण करें।
- 10 अलग–अलग स्थानों से पौधों का निरीक्षण करें।
- पत्तियों की ऊपरी एवं निचली सतह दोनों को देखें।
- प्रारंभिक अवस्था में कीटों की पहचान कर तुरंत नियंत्रण उपाय अपनाएं।
- अनुशंसित मात्रा में ही कीटनाशकों का उपयोग करें।
- मधुमक्खियों एवं प्राकृतिक शत्रुओं की सुरक्षा का ध्यान रखें।
- आवश्यकता अनुसार कृषि विशेषज्ञों से सलाह लें।

निष्कर्ष–

कपास की फसल की प्रारंभिक अवस्था उत्पादन की नींव होती है। इस अवधि में थ्रिप्स, माहू, जेसिड, सफेद मक्खी जैसे कीट गंभीर आर्थिक नुकसान पहुंचा सकते हैं। बीजोपचार, नियमित निगरानी, सांस्कृतिक उपायों तथा समेकित कीट प्रबंधन तकनीकों को अपनाकर किसान इन कीटों का प्रभावी नियंत्रण कर सकते हैं। समय पर किए गए प्रबंधन उपाय न केवल उत्पादन बढ़ाते हैं बल्कि कीटनाशकों पर होने वाले अतिरिक्त खर्च को भी कम करते हैं। अतः किसानों को कपास की प्रारंभिक अवस्था में कीट प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि अधिक उत्पादन एवं बेहतर लाभ प्राप्त किया जा सके।

मूंगफली की उन्नत खेतीः खेत की तैयारी, बीज उपचार और रोग प्रबंधन

डॉ. जुगल किशोर सिल्ला[1], डॉ. भरत लाल मीणा[2] एवं बबीता कुमारी[3]

परिचयः–

मूंगफली तिलहनी फसलों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। मूंगफली का उपयोग कई प्रकार से किया जाता है जैसे तेल, बीज, घरेलू उपयोग एवं निर्यात। यह खाद्य तेल का बहुत ही अच्छा स्रोत हैं। दानों में 48–55 प्रतिशत तेल, 27 प्रतिशत प्रोटीन व 10–21 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट पायी जाती है। इसके तेल का उपयोग सौन्दर्य प्रसाधनों, साबुन क्रीम आदि में किया जाता है।

राजस्थान में मूंगफली की खेती मुख्यतः बीकानेर, जोधपुर, नागौर, जयुपर, सीकर, दौसा, चित्तौड़गढ़, सवाई माधोपुर, टोंक, झुंझुनू आदि जिलों में की जाती हैं।

जलवायुः– मूंगफली उष्णकटिबंधीय जलवायु का पौधा होने के कारण इसे लम्बे एवं गर्म मौसम की आवश्यकता होती है। उत्तरी भारत व राजस्थान में मूंगफली की खेती खरीफ ऋतु में की जाती है। मूंगफली को 50–100 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। इसकी वृद्धि के समय 27–30° सेल्सियस तथा प्रजनन के लिए 24–27° सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है। राजस्थान में कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचित फसल के रूप उगाई जाती है। फूल आने के बाद पौधों को पर्याप्त नमी व प्रकाश मिलते रहना चाहिए।

मृदाः– मूंगफली फसल के लिए अच्छे जल निकास युक्त बलुई, बलुई दोमट मृदा सर्वोत्तम मानी जाती है। मृदा का पी. एच. मान 6 से 8.5 के बीच होना चाहिए।

खेत की तैयारीः– मूंगफली जमीन के अन्दर लगती है। इसलिए बोने से पहले 2–3 बार अच्छी गहरी जुताई करनी चाहिए और पाटा चलाकर मिट्टी भुरभुरी कर लेनी चाहिए भूमिगत कीटो को नष्ट करने के लिए अन्तिम जुताई के समय 25 किग्रा. मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत या क्युनालफॉस 1.5 प्रतिशत प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए।

उन्नतशील किस्मेंः– मूंगफली के आकार प्रकार के अनुसार किस्मों को तीन वर्गो मे बॉंट सकते हैं–

1. झुमका या गुच्छेदारः– इस वर्ग के पौधे भूमि से ऊपर सीधे गुच्छो मे बढ़ते है। फलियाँ मुख्य जड़ के पास ही लगती है। दाना गुलाबी या लाल रंग का होता है तथा जल्दी पकने वाली होती है। इनकी उपज फैलने वाली किस्मों से कम होती है। ये भारी मृदाओ के लिए उपयुक्त होती है।

2. विस्तारः– इन पौधो की शाखायें जमीन के समानात्तार फैलती हैं। मूंगफली दूर–दूर लगती है दाना मोटा तथा भूरे रंग का होता है पकने में समय अधिक लगता है। ये किस्में रेतीली व दोमट मृदाओ के लिए उपयुक्त होती हैं।

3. अर्द्ध विस्तारीः– इन पौधो की शाखायें कम फैलने वाली होती हैं यह गुच्छेदार व विस्तारी के बीच की किस्में हैं। यह मध्यम उपज देने वाली होती हैं।

राजस्थान के लिए उपयुक्त किस्मे निम्न प्रकार है– ए.के. 12–24, ए. एच–114, जी.जी.–2, जी.जी.–20, गिरनार–2 (पी.बी. एस 24030), एच.एन. जी.–10, एच.एन.जी.–123, जे.एल.–24, एम.–13, प्रताप मूंगफली, आर.जी–141, आर.जी.–382 (दुर्गा), आर.जी.–425 (राज. दुर्गा), आर.जी.–510, आर.एस.बी. –87, टी.ए.जी.–24, टी.जी.–37 ए, टी. बी.जी.–39, टी.जी.–39 ।

बीज दर एवं बीजोपचारः– मूंगफली का बीज 80 से 100 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर पर्याप्त होता है। बीज का दाना 10–12 दिन पूर्व निकालना चाहिए। बीजोपचार के लिए प्रति किलो बीज 3 ग्रा. क्लोरोथेलीनील या 8–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा से इस के बाद प्रति किलो बीज 25 मिली क्लोरोपायरीफॉस 20 ईसी से तथा अंत में प्रति हेक्टेयर बीजों के लिए राइजोबियम व पीएसबी कल्चर प्रत्येक के 3 पैकेट से उपचारित करे।

बुआई का समय एवं बुआई की विधिः– मूंगफली की अगेती बुआई 15–20 जून, समय पर बीजाई 20 जून से 15 जुलाई पिछेती बुआई जुलाई 31 तक। मूंगफली की बुआई कतारों में फैलने वाली किस्म की पंक्ति से पंक्ति की दूरी 40–45 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सेमी. तथा गुच्छेदार किस्म की पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. होनी चाहिए। बीज की गहराई 5–7 सेमी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरकः–

1. बुआई से 4 सप्ताह पूर्व प्रति हेक्टेयर 10–15 टन गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट खाद का प्रयोग करे।
2. बुआई से पूर्व प्रति हेक्टेयर 30–50 किग्रा यूरिया या 75 किग्रा अमोनियम सल्फेट 310–375 किग्रा एसएसपी, 40–80 किग्रा एमओपी तथा 25 किग्रा जिंक सल्फेट का उपयोग करें। सिंचाई के बाद आवश्यकतानुसार यूरिया का उपयोग करें। अंतिम जुताई से पूर्व प्रति

1. राजस्थान कृषि अनुसन्धान संस्थान, दुर्गापुरा, जयपुर। 2. राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर। 3. स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर।

हेक्टेयर 250 किग्रा जिप्सम की भी सिफारिश की जाती है क्योंकि कैल्शियम की कमी से मूंगफली के दानों का भराव ठीक से नहीं होता है मृदा परीक्षण के आधार पर बोरोन उर्वरक का भी प्रयोग करें क्योंकि इसकी कमी से मूंगफली के दानों के भीतर खाली स्थान रह जाता हैं। जिसे होलोहर्ट के नाम से जाना जाता है।

सिंचाई:— मूंगफली ग्रीष्मकालीन फसल होने के कारण आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। फूल आने के समय नमी आवश्यक है। वर्षा न होने (सूखा पड़ने) पर 1—2 सिंचाई करनी चाहिए। प्रथम सिंचाई बुआई के 3—4 सप्ताह पर देवें एवं अंतिम सिंचाई अक्टूबर के अंतिम पखवाड़े तक फसलावस्था अनुसार पूरी कर लें।

अंतरा कृषि:— यदि खेत में खरपतवार हो तो 1—2 निराई गुड़ाई कर खरपतवार निकाल देने चाहिए। अन्तिम निराई गुड़ाई 30—40 दिन तक कर देनी चाहिए उसके बाद नहीं करनी चाहिए। फसल में सुइयाँ (अधिकीलन की किया) बनना प्रारम्भ होने के बाद निराई—गुड़ाई नहीं करनी चाहिए। घास कुल के खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण हेतु मूंगफली की खड़ी फसल में बुआई के 20—25 दिन बाद क्यूनॉलफास 5 प्रतिशत ईसी की 1000 मिली. दवा प्रति हेक्टेयर की दर से 500 ली. पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। रेतीली भूमि के अलावा अन्य भूमियों में 30—40 दिन में जड़ों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

पादप संरक्षण:— कीट—दीमक, सफेद लट, लाल भडूली, सुरंग बनाने वाले कीट, माइट आदि मूंगफली की फसल को हानि पहुँचाते है। इनके नियंत्रण के लिए प्रति किलो बीज में 4 मिली क्लोरोपाइरीफॉस 20 ईसी दवा मिला कर उपचार करें एवं अन्य कीटों के लिए 300 मिली. मिथाइल डेमेटोन 25 ईसी या 600 मिली. फॉस्फोमिडोन 40 ईसी को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

मूंगफली के प्रमुख रोग

अगेती पर्ण चित्ती:— इस रोग के धब्बे पौधे उगने के 10 से 18 दिनों के बाद पत्ती की उपरी सतह पर प्रकट होने शुरू हो जाते हैं। इस रोग के धब्बे 1 से 10 मि. मी. के गोलाकार या अनियमित आकार के हल्के पीले रंग के होते हैं बाद में यह धब्बे लाल — भूरे या काले रंग के होते हैं। इन धब्बों की निचली सतह नारंगी रंग की होती है।

पछेती पर्ण चित्ती:— यह रोग पौधे उगने के 28 सड़े 35 दिनों के बाद पत्ती की निचली सतह पर प्रकट होता है। इस रोग के वृत्तकार धब्बों का आकार 1.5 से 5 मि. मी. का होता है। इस रोग के धब्बों का रंग पहले पीले रंग का होता है बाद में यह धब्बे पत्तियों के दोनों सतहों पर काले रंग के हो जाते है। निचली सतह पर यह धब्बे कार्बन की तरह काले नजर आते हैं।

स्तंभमूलसंधि विगलन रोग:— यह मूंगफली का बीज जनित रोग है जो प्रभावित पौधों को शतप्रतिशत हानि पहुंचाता हैं। रोग के लक्षण पौधों के उस भाग पर प्रकट होते हैं जो मिट्टी की सतह से लगा होता है। मिट्टी की सतह का तने का भाग (कालर भाग) रोग जनक फफूंद से ग्रसित हो जाता हैं। यह रोग पौधों के आधार को कमजोर कर देती है। जिससे पौधे गिर जाते हैं एवं सूखकर मुरझा जाते हैं। इन प्रभावित पौधों के सूखी सड़न वाले स्थान पर रोगजनक फफूंद की उभरी हुई काली — काली रचनाएँ स्पष्ट दिखाई देती है।

तना विगलन:— तने पर रोग का संक्रमण मिट्टी की सतह के पास या तने के सबसे निचले हिस्से पर होता है। इस रोग के लक्षण सूखे मौसम में मिट्टी की सतह के नीचे एवं गीले मौसम में मिट्टी की सतह के नीचे एवं गीले मौसम में मिट्टी की सतह के ऊपर तने पर पाए जाते है। शुरू में मिट्टी की सतह के पास तने पर गहरी घूसर विक्षति प्रकट होती है फिर यह विक्षति सफेद कवक जाल से तने के प्रभावित भाग को ढक लेती है। स्पष्ट सड़न नीचे की ओर प्रकट होती है एवं पौधे के हरे भाग पीलापन एवं घूसर रंग के होकर मुरझा जाते हैं। रोग के संक्रमण से एक या दो शाखाएं या फिर पौधा मर जाता है।

उखटा, रोजेट रोग, चित्तीदार रोग, किट्ट रोग, जड़ गलन, अंगमारी, कालर गलन आदि से हानि होती हैं। नियंत्रण के लिए 4 किग्रा. ट्राइकोडर्मा हरजेनियम प्रति हेक्टेयर की दर से 50—60 किलो गोबर की खाद में मिलाकर 15 दिन छाया में रखकर बुआई के समय भूमि में मिला दें। जड़ गलन के लिए 100 किग्रा. म्यूरेट आफ पोटाश एवं 60 किग्रा. जिंक सल्फेट को बुआई से पूर्व भूमि में मिलाना भी लाभप्रद रहता है।

टिक्का रोग के नियंत्रण के लिए आधा ग्राम कार्बेण्डाजिम प्रति लीटर पानी के घोल का या 1.5 किग्रा मैन्कोजेब का प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें। इसके बाद 10—15 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव और करें। छछिया रोग के लिए 3 वर्ष में एक बार 300 किग्रा. गंधक या हरा कसीस प्रति हेक्टेयर बुआई पूर्व प्रयोग करे या फसल में फूल आने से पहले गंधक अम्ल का 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव दो बार करें।

कटाई:— मूंगफली के पकने का समय अक्टूबर से नवम्बर तक है जब 75 प्रतिशत फलियाँ पक जावे एवं पतियाँ पीली पड़ जाये तो खुदाई कर लेनी चाहिए। खुदाई से पहले कई स्थानों से पौधे उखाड़ कर जाँच कर लें। खुदाई से पूर्व हल्की सिंचाई कर दे जिससे फलियाँ टूट कर जमीन में नहीं रहती हैं।

उपज:— गुच्छेदार किस्मों से 12—15 क्विंटल फैलने वाली किस्मों से 18—20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती हैं। सिंचित क्षेत्रों में 20—40 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज मिलती है। फलियों के अलावा 30—35 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सूखा चारा भी प्राप्त होता है।

राजस्थान के शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों हेतु प्रमुख खरीफ दलहनों की उन्नत किस्में

अमन[1], कपिल बिश्नोई[1] और सुजीत कुमार यादव[2]

दलहनी फसलें भारतीय एवं राजस्थान की कृषि प्रणाली का एक महत्वपूर्ण आधार हैं। ये प्रोटीन का प्रमुख स्रोत होने के साथ–साथ मृदा की उर्वरता बढ़ाने और नाइट्रोजन स्थिरीकरण में भी सहायक हैं। कम जल में अच्छी उपज देने के कारण ये शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के लिए अत्यंत उपयोगी हैं। राजस्थान में अनिश्चित वर्षा और सीमित जल संसाधनों की स्थिति में खरीफ ऋतु की मूंग, मोठ, ग्वार और लोबिया जैसी दलहनी फसलें किसानों की आर्थिक सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

राजस्थान में दलहनी फसलों का राष्ट्रीय स्तर पर योगदान

भारत में राजस्थान दलहनी फसलों के उत्पादन में विशेषकर मोठ, ग्वार (क्लस्टरबीन) और मूंग जैसी फसलों में एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हमारा राज्य मोठ की खेती में लगभग पूर्ण रूप से अग्रणी है, जहाँ देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 98.5 प्रतिशत और कुल उत्पादन का 97.4 प्रतिशत योगदान राजस्थान से ही प्राप्त होता है। इस प्रकार मोठ की खेती लगभग पूरी तरह से राजस्थान में केंद्रित है। इसी प्रकार, ग्वार के उत्पादन में भी राजस्थान का मुख्य योगदान है, जहाँ देश के कुल क्षेत्रफल का 87.97 प्रतिशत और कुल उत्पादन का 86.12 प्रतिशत भाग राजस्थान से प्राप्त होता है। यह दर्शाता है कि ग्वार की खेती में भी राज्य की स्थिति बहुत मजबूत है। मूंग के उत्पादन में भी राजस्थान का महत्वपूर्ण स्थान है, जहाँ देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 48.63 प्रतिशत और कुल उत्पादन का 43.10 प्रतिशत योगदान राज्य द्वारा किया जाता है। इस प्रकार राजस्थान भारत में दलहनी फसलों, विशेषकर खरीफ दलहनों के उत्पादन का एक प्रमुख केंद्र है।

राजस्थान में खरीफ दलहनी फसलों के प्रमुख उत्पादक जिले:

क्र. सं.	फसल	प्रमुख कृषि–जलवायु क्षेत्र	प्रमुख उत्पादक जिले
1	मूंग	शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र	नागौर, जोधपुर, जालौर, अजमेर, जयपुर, चूरू, पाली, टोंक, बीकानेर, बाड़मेर, सीकर एवं झुंझुनूं
2	ग्वार	शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र	नागौर, जोधपुर, जालौर, अजमेर, जयपुर, चूरू, पाली, बीकानेर, बाड़मेर, सीकर एवं झुंझुनूं
3	मोठ	शुष्क क्षेत्र	बीकानेर, चूरू, बाड़मेर, जोधपुर, नागौर एवं हनुमानगढ़
4	लोबिया/चंवला	शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र	सीकर, झुंझुनूं, नागौर, जोधपुर, जालौर, अजमेर, जयपुर, चूरू, पाली, बीकानेर एवं बाड़मेर

राजस्थान के शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली खरीफ ऋतु की प्रमुख दलहनी फसलों की बेहतर उपज और रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिए विकसित उन्नत किस्में निम्न प्रकार हैं:

1. मोठः शुष्क क्षेत्रों की जीवनरेखा फसल

किस्म	विमोचन वर्ष	अनुशंसित क्षेत्र	मुख्य विशेषताएँ
काजरी मोठ 7 (सी.जेड.एम.ओ. 18–4)	2025	भारत के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 75–77 दिन, उपजः 6 .0–8.0 क्विंटल/हेक्टेयर, अर्ध–फैलाव पौधे, लंबा पेडुनकल, चमकदार भूरा दाना, रोग प्रतिरोधी, गहरे हरे पत्ते
काजरी मोठ 6 (सी.जेड.एम.ओ. 18–3)	2025	भारत के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 74–76 दिन, उपजः 6 .0–8.0 क्विंटल/हेक्टेयर, चमकदार भूरा दाना, रोग प्रतिरोधी, फसल की अंतिम अवस्था में सूखा सहन करने की क्षमता, गहरे हरे पत्ते
काजरी मोठ 4 (सी.जेड.एम.ओ. 18–2)	2024	भारत के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 73–83 दिन, उपजः 5 .0–8.0 क्विंटल/हेक्टेयर, चमकदार भूरा दाना, पत्ती एवं जड़ रोगों के प्रति प्रतिरोधी, फसल की अंतिम अवस्था में सूखा सहन करने की क्षमता, गहरे हरे पत्ते
काजरी मोठ 5 (सी.जेड.एम.ओ. 18–5)	2024	भारत के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 65–70 दिन, उपजः 6 .0–8.0 क्विंटल/हेक्टेयर, अर्ध–फैलाव पौधे, लंबा पेडुनकल, चमकदार भूरा दाना, रोग प्रतिरोधी, पत्तियाँ परिपक्वता तक हरी
आर.एम.ओ. 2251 (मरुधर)	2016	राजस्थान के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 63–67 दिन, उपजः 6 .0–6.5 क्विंटल/हेक्टेयर, चूसक कीट (जेसिड, व्हाइटफ्लाई) के प्रति प्रतिरोधी, शीघ्र पकने वाली किस्म
आर.एम.बी. 25 (आर.एम.ओ. 2004)	2004	राजस्थान के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, उच्च उपज (आर.एम.ओ.–225 से 28 .6 प्रतिशत अधिक), चारा उपज (आर .एम.ओ.–257 से 15 .4 प्रतिशत अधिक), पीत विषाणु रोग के प्रति प्रतिरोधी, उच्च प्रोटीन
आर.एम.ओ. 257	2002	राजस्थान के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधा रित, पकाव अवधिः 65 दिन, दाना एवं चारा दोनों हेतु उच्च उपज, 3–6 शाखाएँ, गुच्छेदार फूल, फैलावदार पौधे
आर.एम.ओ. 423	2002	राजस्थान के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 67–70 दिन, उपजरू 6.0–7.0 क्विंटल/हेक्टेयर, ल्डट एवं कीट प्रतिरोधी, बीज एवं चारा दोनों हेतु उपयुक्त
आर.एम.ओ. 435	2001	भारत के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 67–70 दिन, उपजः 6 .0–8.0 क्विंटल/हेक्टेयर, सूखा सहनशील, चारा मूल्य वाला, बहुउद्देशीय उपयोग
आर.एम.ओ. 225 (मरू वरदान)	1990	भारत के सभी मोठ उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 64–67 दिन, उपजः 6–7 .5 क्विंटल/हेक्टेयर, पीत विषाणु रोग के प्रति प्रतिरोधी, सूखा सह नशील, चारा एवं दाना दोनों हेतु उपयुक्त
आर.एम.ओ. 40	1994	भारत के शुष्क क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 62–65 दिन, उपजः 6 .0–8.0 क्विंटल/हेक्टेयर, सीधा छोटा पौधा, पीत विषाणु रोग के प्रति एवं सूखा सहनशील, उच्च हार्वेस्ट इंडेक्स (कटाई सूचकांक)

2. मूंगः शीघ्र पकने वाली एवं उच्च उत्पादक फसल

किस्म	विमोचन वर्ष	अनुशंसित क्षेत्र	मुख्य विशेषताएँ
एम.एच. 1142	2019	मुख्य रूप से राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश	पकाव अवधि 60–65 दिन, उच्च उत्पादन क्षमता, औसत उपज 20 क्विंटल/हेक्टेयर तक, पर्णपीत, पत्ती धब्बा एवं चूर्णिल आसिता प्रतिरोधी
आर.एम.जी. 975	2016	राजस्थान	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 68–72 दिन, उपज : 10–12 क्विंटल/हेक्टेयर, हरे चमकदार आयताकार दाने, मूंगबीन पीला मोजेक विषाणु रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी
एम.एस.जे. 118	2016	राजस्थान	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 65–70 दिन, उपज : 10–12 क्विंटल/हेक्टेयर, खाकी हरे आयताकार मध्यम बीज, मूंगबीन पीला मोजेक विषाणु रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी
विराट (आ.ई.पी. एम. 205–7)	2016	उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्र (पंजाब, हरियाणा, राजस्थान आदि)	फसल अवधि लगभग 52–56 दिन, औसत उत्पादन लगभग 10–11 क्विंटल प्रति हेक्टेयर, पीला मोजेक विषाणु रोग के प्रति उच्च प्रतिरोध, तेजी से पकने की क्षमता, एकसमान वृद्धि एवं परिपक्वता तथा चमकदार हरे एवं आकर्षक दाने, कम अवधि होने के कारण यह फसल–गहन प्रणाली (जैसे गेहूं के बाद ग्रीष्मकालीन बुवाई) के लिए बहुत उपयोगी है
जी.ए.एम.–5	2015	गुजरात और राजस्थान	पीत चिती विषाणु रोग के प्रति अत्यधिक सहनशील, बड़े, चमकीले एवं आकर्षक दाने वाली उच्च गुणवत्ता की किस्म, औसत उपज लगभग 7 .2 से 7.6 क्विंटल प्रति एकड़, पकाव अवधि लगभग 60–65 दिन
एम.एच.–421	2014	हरियाणा, राजस्थान और पंजाब	पकाव अवधि लगभग 60 दिन, हरे, चमकीले एवं मध्यम आकार के दाने। पकने पर फलियाँ नहीं फटती। खरीफ, जायद एवं ग्रीष्मकालीन बुवाई के लिए उपयुक्त। पीत चिती विषाणु रोग के प्रति सहनशील। औसत उपज लगभग 5–9 क्विंटल प्रति एकड़
आई.पी.एम. 99–125 (मेहा)	2005	उत्तर–पूर्वी मैदानी क्षेत्र	पीत विषाणु रोग के प्रति सहनशील, कम अवधि वाली किस्म, औसत उपज 12–15 क्विंटल/हेक्टेयर।
एस.एम.एल.–668 (शक्ति)	2003	पंजाब, हरियाणा और राजस्थान	पकाव अवधि 60–65 दिन। मजबूत तना, फलियाँ नीचे की ओर झुकी हुई, प्रति फली 10–11 दाने, जायद व खरीफ दोनों के लिए उपयुक्त, औसत उपज लगभग 8–10 क्विंटल प्रति एकड़
आर.एम.जी. 492	2003	राजस्थान	पकाव अवधि 80–85 दिन। पौधे लगभग 85 सेमी ऊँचे, मध्यम आकार के चमकदार दाने, 1000 दानों का वजन 36 ग्राम। औसत उपज 4–4.5 क्विंटल/बीघा।
आर.एम.जी. 344	2001	राजस्थान	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 68–72 दिन, उपजः 9–10 क्विंटल/हेक्टेयर, चमकदार हरे आयताकार बीज, पीत विषाणु रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी
आर.एम.जी. 268	1998	राजस्थान	कृषि स्थितिः कम वर्षा एवं सामान्य बुवाई हेतु उपयुक्त, पकाव अवधिरू 64–70 दिन, उपजरू 8–10 क्विंटल/हेक्टेयर, सूखा प्रतिरोधी, वेब ब्लाइट सहनशील, फोटो–इंसेंसिटिव, फसल पकने के बाद भी पत्तियाँ हरी रहती हैं
आर.एम.जी. 62	1991	राजस्थान (अर्ध–शुष्क	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 65–70 दिन, उपजः 7–8

उपयुक्त नमी एवं सामान्य परिस्थितियों में आर.एम.जी.–268, एस.एम.एल.–668, एम.यू.एम.–2 तथा आर.एम.जी.–62 किस्मों को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि शुष्क एवं कम नमी वाले क्षेत्रों में आर.एम.जी.–268 को प्रमुखता के साथ अपनाया जाना चाहिए तथा इसके साथ एस.एम.एल.–668, आर.एम.जी.–62 एवं एम.यू.एम.–2 को भी प्राथमिकता से उपयोग किया जा सकता है।

3. ग्वारः औद्योगिक एवं कृषि महत्व की फसल

[1,2]आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
Email: sujit3778@gmail.com

किस्म	विमोचन वर्ष	अनुशंसित क्षेत्र	मुख्य विशेषताएँ
करण ग्वार 15	2024	भारत के सभी ग्वार उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 99–104 दिन, उपजः 14–15 क्विंटल/हेक्टेयर, एंडोस्पर्म 32.46 प्रतिशत, गोंद 29.75 प्रतिशत, विस्कोसिटी 3385 सी.पी., दांतेदार पत्तियाँ, सफेद फूल
करण ग्वार 14	2023	उत्तर भारत के सभी ग्वार उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 95–96 दिन, उपजः 12–13 क्विंटल/हेक्टेयर, एंडोस्पर्म 32.26 प्रतिशत, गोंद 29 प्रतिशत, उच्च विस्कोसिटी 3412 सी.पी., शाखायुक्त पौधे, दांतेदार पत्तियाँ, गुलाबी फूल
करण ग्वार 1	2018	राजस्थान	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 82–92 दिन, उपजः 10–12 क्विंटल/हेक्टेयर, मध्यम ऊँचाई, शाखायुक्त पौधे, गुलाबी फूल, गोंद लगभग 29.5 प्रतिशत
एच.जी. 2–20	2010	राजस्थान	पकाव अवधिः 110–120 दिन, पौधे 95–105 सेमी ऊँचे एवं अधिक शाखायुक्त, बीमारियों के प्रति मध्यम सहनशील, फूल 40–50 दिन में आते हैं। कम गिरने वाली किस्म। औसत उपज 12–16 क्विंटल/हेक्टेयर।
कुंजल/ आर.जी.सी –1033	2011	उत्तर भारत के सभी ग्वार उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 95–106 दिन, उपजः 15–25 क्विंटल/हेक्टेयर, 70–110 सेमी ऊँचाई, अत्यधिक शाखायुक्त, गहरे हरे पत्ते, गुलाबी फूल, गोंद 29–31 प्रतिशत
ग्वार करण/ आर.जी.सी –1038	2009	उत्तर भारत के सभी ग्वार उत्पादक क्षेत्र	दोनों मौसम उपयुक्त, पकाव अवधिः 100–105 दिन, उपजः 11–22 क्विंटल/हेक्टेयर, मध्यम अवधि, अधिक शाखायुक्त, गहरे कटावदार पत्ते, गुलाबी फूल, गोंद 28.9–32.6 प्रतिशत
लाठी ग्वार / आर.जी.सी –1066	2007	राजस्थान	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित एवं सिंचित, पकाव अवधिः 100–105 दिन, उपजः 10–15 क्विंटल/हेक्टेयर, एकल तना, मशीन हार्वेस्टिंग हेतु उपयुक्त, अंतरफसल के लिए उपयुक्त
ग्वार उदय / आर.जी.सी –1055	2007	राजस्थान के अर्ध–शुष्क क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 95–110 दिन, उपजः 20–22 क्विंटल/हेक्टेयर, 75–90 सेमी ऊँचाई, शाखायुक्त पौधे, गुलाबी फूल, रोएंदार पत्तियाँ
ग्वार क्रांति / आर.जी.सी –1031	2005	उत्तर भारत के सभी ग्वार उत्पादक क्षेत्र	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 110–114 दिन, उपजः 11–16 क्विंटल/हेक्टेयर, 75–90 सेमी ऊँचाई, शाखायुक्त

4. लोबियाः पोषण और बहुउपयोगी दलहनी फसल

किस्म	विमोचन वर्ष	अनुशंसित क्षेत्र	मुख्य विशेषताएँ
करण चंवला 1 (सी.पी.डी. 119)	2018	राजस्थान	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 70 दिन, उपजः 6.5–7.0 क्विंटल/हेक्टेयर, बीजः सफेद बड़े–मध्यम मोटे (11.9 ग्राम/100 बीज) काले–भूरे मलम के साथ, उपभोक्ताओं के लिए आकर्षक, मोजेक, नेक्रोसिस, जड़ गलन के प्रति मध्यम प्रतिरोधी
आर.सी. 101	2001	राजस्थान	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 65–70 दिन, उपजः 6–8 क्विंटल/हेक्टेयर, पौधे मध्यम ऊँचाई (45 सेमी), सफेद बीज (11.18 ग्राम/100 बीज), रोग एवं कीटों के प्रति मध्यम सहनशील
आर.सी. 19	1987	राजस्थान	कृषि स्थितिः वर्षा आधारित, पकाव अवधिः 60 दिन, उपजः 7–8 क्विंटल/हेक्टेयर, लाल–भूरे मध्यम आकार के बीज (10.0 ग्राम/100 बीज), नेक्रोसिस एवं जड़ गलन (रूट रॉट) के प्रति मध्यम प्रतिरोधी

किस्म चयन करते समय किसानों को क्षेत्र व जलवायु के अनुसार सूखा–प्रतिरोधी या उच्च उत्पादकता वाली किस्मों का चयन करना चाहिए तथा शीघ्र पकने, रोग–प्रतिरोधकता और मजबूत पौधा संरचना पर विशेष ध्यान देना चाहिए। बेहतर परिणाम हेतु स्थानीय मृदा परीक्षण, मौसम पूर्वानुमान तथा कृषि विभाग/केवीके के मार्गदर्शन का पालन आवश्यक है।

पत्रिका में प्रकाशित आलेख/विचार लेखकों के अपने हैं।

मोठ की वैज्ञानिक खेती: पश्चिमी राजस्थान के किसानों के लिए वरदान

कपिल बिश्नोई[1], अमन[1] और ऐ. के. शर्मा[2]

परिचय

मोठ की फसल विषम वातावरण और पानी की भारी कमी वाली कठोर परिस्थितियों में भी आसानी से फलने–फूलने की अपनी विशेष क्षमता के लिए पहचानी जाती है। अपनी इसी अनुकूलता के कारण इसकी खेती मुख्य रूप से राजस्थान के पश्चिमी क्षेत्रों में की जाती है, जो पूरे देश के कुल मोठ बुवाई क्षेत्र का 86 प्रतिशत हिस्सा है और देश के कुल सफल मोठ उत्पादन में 82 प्रतिशत का बड़ा योगदान देता है। मोठ को यदि थार मरुस्थल की संजीवनी या मरुस्थल का सोना कहा जाए, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। यह एक ऐसी दलहनी फसल है जो 45^{0} से अधिक तापमान को आसानी से सहन करने की अद्भुत प्राकृतिक क्षमता रखती है।

इस पौधे की चौड़ी और चारों तरफ फैली हुई पत्तियां जमीन की नमी को भीतर समेटकर आसपास के तापमान को कम बनाए रखने में बहुत मददगार साबित होती हैं। पौधों से मिलने वाले प्रोटीन का एक बहुत ही सस्ता माध्यम होने की वजह से ग्रामीण अंचलों में इसकी हरी पत्तियों को भोजन के रूप में भी उपयोग में लाया जाता है। इस फसल को उगाने के लिए कृत्रिम सिंचाई अथवा अन्य विशेष कृषि कार्यों की जरूरत बहुत ही कम पड़ती है। यही वजह है कि भीषण सूखे के दौर में और ऐसे रेतीले इलाकों में जहां अक्सर अकाल जैसी स्थिति पैदा हो जाती है, वहां केवल मोठ की फसल ही मनुष्यों के लिए अनाज और मवेशियों के लिए सूखा चारा प्रदान करने का एकमात्र जरिया बचती है। मरुस्थलीय क्षेत्रों, समतल मैदानों और कम उपजाऊ भूमि वाले किसानों के बीच यह फसल अपनी इन्हीं खूबियों के कारण अत्यधिक लोकप्रिय और भरोसेमंद मानी जाती है। हालांकि अन्य दाल वाली फसलों की तुलना में वर्तमान में मोठ की प्रति हैक्टेयर पैदावार सबसे कम यानी केवल 254 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर ही है, परंतु यदि किसानों के बीच मोठ उत्पादन की आधुनिक और उन्नत वैज्ञानिक कूटनीतियों का सही ढंग से प्रचार और प्रसार किया जाए, तो इसकी कुल पैदावार में बहुत बड़ी वृद्धि की जा सकती है।

भूमि की तैयारी

मोठ की खेती वैसे तो हर प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है, लेकिन पश्चिमी राजस्थान की बलुई, रेतीली और मरुस्थलीय दोमट मिट्टी इसके लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। इस फसल के लिए बहुत अधिक जुताई की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि अधिक जुताई से रेतीली मिट्टी के उड़ने (मृदा अपरदन) का खतरा बढ़ जाता है। गर्मी के दिनों में (मई–जून में) खेत की एक गहरी जुताई करके छोड़ देना चाहिए। इससे मिट्टी में छुपे हुए कीटों के अंडे, प्यूपा और खरपतवार के बीज तेज धूप से नष्ट हो जाते हैं। पहली मानसूनी बारिश (आषाढ़ की शुरुआत) होने के तुरंत बाद खेत में कल्टीवेटर या हैरो से एक या दो हल्की जुताइयां करके पाटा लगा देना चाहिए ताकि खेत समतल हो जाए और नमी सुरक्षित रहे।

बुवाई का उचित समय

शुष्क इलाकों में मोठ की अधिकतम पैदावार लेने के लिए उसकी बुवाई का समय चुनना एक बेहद आवश्यक कृषि कार्य है। चूंकि मोठ की खेती मुख्य रूप से बारानी यानी पूरी तरह वर्षा पर आधारित क्षेत्रों में की जाती है, इसलिए मानसून की अच्छी वर्षा जो लगभग 30 से 40 सेमी तक हो, उसके होते ही तुरंत बुवाई कर देनी चाहिए। यदि जुलाई के पहले सप्ताह जैसी अगेती या जल्दी बुवाई की जाती है, तो उससे मोठ के पौधों की कायिक वृद्धि बहुत अधिक हो जाती है और पौधे 50 से 60 सेमी तक लंबे हो जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप दाने का उत्पादन कम मिलता है। इसके विपरीत, यदि बुवाई में थोड़ा सा विलंब किया जाए तो पौधों की लंबाई और वानस्पतिक वृद्धि तो कम रहती है, परंतु उनमें फलियां अधिक संख्या में लगती हैं जिससे कुल पैदावार में बढ़ोतरी हो जाती है। इसी वैज्ञानिक तथ्य को ध्यान में रखते हुए पश्चिमी राजस्थान के रेतीले भूभागों में मोठ की बुवाई करने का सबसे उपयुक्त और सटीक समय 15 से 25 जुलाई के मध्य माना गया है। यहाँ यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि यदि बुवाई में बहुत ज्यादा देरी कर दी जाए, तो फसल में पीत शिरा मोजेक वायरस नामक रोग का प्रकोप अत्यधिक बढ़ जाता है।

बीज दर और बीजोपचार:

प्रति हेक्टेयर पौधों की सही संख्या ही अच्छे उत्पादन की गारंटी है। वैज्ञानिक विधि से खेती करने के लिए बीज की सही मात्रा और उसका उपचार करना अनिवार्य है।

- शुद्ध खेती के लिए: 10 से 12 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर।
- मिश्रित खेती के लिए: यदि बाजरा या ग्वार के साथ बो रहे हैं, तो 3 से 4 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है।

मोठ के बीजों को बुआई से पहले रस चूसक कीटों से बचाने के लिए फिप्रोनिल 5 एस सी (4 मिलीलीटर प्रति किलो बीज) की दर से हल्के हाथों से उपचारित करके छाया में सुखा लें। इसके बाद, बेहतर नाइट्रोजन स्थिरीकरण (गांठें बनाने) के लिए बीजों पर राइजोबियम

[1]आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
[2]आचार्य, आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
Email: bishnoikapil69@gmail.com

कल्चर (20–25 ग्राम प्रति किलो बीज) और ठंडे गुड़ के पानी के घोल का लेप लगाकर छाया में सुखाएं और 6–8 घंटे के भीतर बुआई कर दें।

प्रमुख उन्नत किस्में और उनकी विशेषताएं:

किस्म का नाम	पकने की अवधि (दिन)	उपज क्षमता	विशिष्ट वैज्ञानिक विशेषताएं
काजरी मोठ–7 (सीजेडएमओ–18–4)	75 – 77	652 किलोग्राम	काजरी, जोधपुर द्वारा विकसित नई किस्म। यह राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र और कर्नाटक के बारानी क्षेत्रों के लिए आदर्श है। इसमें 21.5 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है तथा किसी बड़े रोग के संकेत नहीं दिखाई दिए।
काजरी मोठ–5 (सीजेडएमओ–18–5)	60 – 65	900 – 1050 किलोग्राम	काजरी, जोधपुर द्वारा हाल ही में विकसित। पुरानी किस्मों की तुलना में 27 प्रतिशत तक अधिक पैदावार। यह बिना बारिश के 40 दिनों तक के भयंकर सूखे को आसानी से सहन कर सकती है।
काजरी मोठ–4	60 – 62	850 – 950 किलोग्राम	काजरी, जोधपुर की नई विमोचित किस्म। अत्यधिक सूखा–रोधी किस्म, जो थार मरुस्थल के अति–शुष्क इलाकों के लिए सर्वथा उपयुक्त है।
आरएमओ–2251 (मरुधर)	63 – 67	800 – 950 किलोग्राम	कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर द्वारा जारी की गई एक बेहद उत्कृष्ट किस्म। पीला मोजेक वायरस (YMV) के प्रति उत्कृष्ट सहनशीलता और दाने का आकार सुडौल व चमकीला।
काजरी मोठ–3 (सीजेडएम–99)	60 – 62	800 – 900 किलोग्राम	काजरी, जोधपुर द्वारा विकसित एक बेहद लोकप्रिय किस्म। सीधे बढ़ने वाले पौधे होने के कारण इसकी कटाई आसान होती है।
आरएमओ–435	67 – 70	600 – 800 किलोग्राम	शुष्क और बारानी क्षेत्रों की बेहद लोकप्रिय और अगेती किस्म। जल्दी पकने के कारण अंतिम दौर के सूखे से बचकर सुरक्षित पैदावार देती है।
आरएमओ–40	62 – 65	600 – 800 किलोग्राम	उत्परिवर्तन प्रजनन से विकसित छोटे कद की किस्म। समकालिक परिपक्वता इसकी मुख्य विशेषता है।
आरएमओ–257	65 – 67	700 – 850 किलोग्राम	मध्यम अवधि की किस्म, जिसका दाना मध्यम आकार का और चमकीला होता है। पश्चिमी राजस्थान के बारानी क्षेत्रों में इसकी व्यापक स्वीकार्यता है।
आरएमओ–225 (मरु वरदान)	65 – 70	600 – 750 किलोग्राम	चौड़ी पत्ती वाली सेमी–स्प्रेडिंग वैराइटी। वानस्पतिक आवरण अधिक होने के कारण भूमि के तापमान को नियंत्रित करने और नमी को वाष्पीकृत होने से रोकने में प्रभावी।
काजरी मोठ–2 (सीजेडएम–45)	60 – 65	400 – 650 किलोग्राम	130 से 150 मिमी जैसी न्यूनतम और अनिश्चित वर्षा वाले अति–शुष्क मरुस्थलीय क्षेत्रों में भी दाना बनाने की अद्भुत क्षमता।

प्रमुख रोग व कीट प्रबंधन

यद्यपि मोठ एक सूखा–सहनशील फसल है, फिर भी कुछ विशिष्ट कीट और रोग इसके उत्पादन को 30 से 50 प्रतिशत तक कम कर सकते हैं। समय पर इनकी पहचान और वैज्ञानिक प्रबंधन आवश्यक है।

अ. प्रमुख कीट:

1.कातरा: मानसून की पहली बारिश के बाद इस कीट की लटें निकलती हैं जो अंकुरित हो रहे छोटे पौधों को पूरी तरह खा जाती हैं।प्रबंधन हेतु खेत के चारों ओर गहरी खाइयां खोदें ताकि लटें दूसरे खेत में न जा सकें। तीव्र प्रकोप होने पर क्विनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण का 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव करें।

2.सफेद मक्खी और थ्रिप्स: ये छोटे कीट पत्तियों का रस चूसते हैं जिससे पत्तियां मुड़ जाती हैं। सबसे खतरनाक बात यह है कि सफेद मक्खी श्पीला मोजेक वायरस फैलाती है।प्रबंधन हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल का 0.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में या डायमेथोएट 30 ई सी का 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

3.दीमक: रेतीली मिट्टी में जड़ों को काटकर पौधों को सुखा देती है। प्रबंधन हेतु बीजोपचार के अलावा, खड़ी फसल में सिंचाई के पानी के साथ या हल्की बारिश से पहले क्लोरपायरीफॉस 20 ई सी का प्रयोग करें।

ब. प्रमुख रोग:

1.पीला मोजेक वायरस: इसमें पत्तियां तेजी से पीली पड़ने लगती हैं और पौधों का विकास रुक जाता है।प्रबंधन हेतु चूंकि यह वायरस सफेद मक्खी द्वारा फैलता है, इसलिए ऊपर बताए गए कीटनाशकों से सफेद मक्खी को नियंत्रित करें। ग्रसित पौधों को शुरुआत में ही उखाड़कर जमीन में गाड़ दें।

2.जड़ गलन/उकठा: जमीन के पास से तना और जड़ें काली पड़कर सड़ने लगती हैं और पौधा सूख जाता है।प्रबंधन हेतु इसके लिए बीजोपचार (थाइराम/ट्राइकोडर्मा) ही एकमात्र प्रभावी उपाय है। खड़ी फसल में रोग दिखने पर प्रभावित क्षेत्र में कार्बेन्डाजिम (1 ग्राम/लीटर) का कतारों में छिड़काव करें।

3. जीवाणुज अंगमारी या जीवाणुज पर्ण चित्ती: यह मुख्यतः राजस्थान में

पाया जाने वाला रोग है जो वातावरण में आर्द्रता बढ़ने पर जेन्थोमोनास फेसीयोलोई नामक जीवाणु के संक्रमण से तेजी से फैलता है। इसके प्रभाव से पत्तियों, टहनियों और फलियों पर भूरे–काले रंग के अनियमित उत्तक्षयी धब्बे बन जाते हैं और उग्र अवस्था में पत्तियां समय से पहले ही गिर जाती हैं। इसके वैज्ञानिक नियंत्रण के लिए प्रतिरोधी किस्में बोनी चाहिए तथा प्राथमिक संक्रमण रोकने के लिए प्रति किलोग्राम बीज को स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (0.01 प्रतिशत). कैप्टन (2 ग्राम) से उपचारित करना चाहिए।

कटाई और मड़ाई

मोठ की कटाई में थोड़ी सी भी लापरवाही दानों को खेत में ही बिखेर सकती है, क्योंकि पकने के बाद इसकी फलियां बहुत जल्दी चटकने लगती हैं।

कटाई का सही समयः जब पौधे की पत्तियां पीली होकर झड़ने लगें और लगभग 80 से 85 प्रतिशत फलियां भूरे या काले रंग की होकर सूख जाएं, तो फसल कटाई के लिए तैयार समझनी चाहिए। कटाई हमेशा सुबह के समय करनी चाहिए जब ओस की हल्की नमी के कारण फलियां चटकती नहीं हैं। कटी हुई फसल को छोटे–छोटे ढेरों में बांधकर खेत में ही 3 से 4 दिनों तक अच्छी तरह धूप में सुखाना चाहिए। पूर्णतः सूखने के बाद ट्रैक्टर के टायरों, थ्रेशर या पारंपरिक रूप से डंडों से पीटकर दानों को भूसे से अलग कर लिया जाता है।

भंडारणः

पश्चिमी राजस्थान के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के किसानों के लिए मोठ सिर्फ एक फसल नहीं, बल्कि अकाल के दिनों के लिए उनका बैंक अकाउंट है। इसलिए इसका सुरक्षित भंडारण अत्यंत महत्वपूर्ण है ताकि इसे घुन और नमी से बचाया जा सके।

वैज्ञानिक भंडारण के नियमः

- **नमी की मात्राः** भंडारण से पहले दानों को धूप में इतनी अच्छी तरह सुखाएं कि उनमें नमी की मात्रा 8 से 9 प्रतिशत से अधिक न रहे। दाने को दांत से तोड़ने पर कट की आवाज आनी चाहिए।
- **भंडारण का स्थानः** गोदाम या कोठी पूरी तरह सूखी, हवादार और सीलन मुक्त होनी चाहिए। फर्श और दीवारों पर पहले मैलाथियान 50 ई सी का छिड़काव करके उसे सुखा लेना चाहिए।
- **कीटों से सुरक्षाः** घरेलू स्तर पर अनाज को सुरक्षित रखने के लिए नीम की सूखी पत्तियां (जमीन पर और बीच–बीच में) मिलाई जा सकती हैं। व्यावसायिक या बड़े स्तर पर सुरक्षित भंडारण के लिए एल्युमिनियम फॉस्फाइड की 1 गोली प्रति टन अनाज की दर से एयर–टाइट डिब्बों या पूसा कोठियों में इस्तेमाल करनी चाहिए।

पश्चिमी राजस्थान के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में जहाँ प्रकृति हर कदम पर चुनौती पेश करती है, वहाँ मोठ की वैज्ञानिक खेती पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक कृषि विज्ञान का एक बेहतरीन संगम है। सही उन्नत किस्मों का चयन, वैज्ञानिक बीजोपचार और उचित समय पर कीट प्रबंधन करके किसान भाई न केवल अपनी फसलों को सूखे से बचा सकते हैं, बल्कि विषम परिस्थितियों में भी बंपर मुनाफा कमाकर अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ कर सकते हैं। वास्तव में, मोठ आज भी थार के किसानों का सबसे सच्चा और टिकाऊ सहारा है।

लेखक अपने आलेख
dee@raubikaner.org /
rajeshvermasct@gmail.com
पर हिन्दी फोन्ट कृतिदेव 10 में वर्ड फाईल व पीडीएफ दोनों में भिजवाने का श्रम करें।

खरीफ फसलों में बीजोपचार कर फसल की लागत कम करें और अधिक लाभ कमाएं

पार्वती दीवान[1], राजहंस वर्मा[1], हनुमान लाल[2], वी. एस. मीणा[1] एवं पी. के. हटवाल[1]

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ अधिकांश किसान खरीफ मौसम में धान, मक्का, बाजरा, ज्वार, सोयाबीन, मूंगफली, मूंग, उड़द तथा कपास जैसी फसलों की खेती करते हैं।कृषि उत्पादन में बढ़ती लागत किसानों के लिए एक बड़ी चुनौती है। उर्वरकों, कीटनाशकों, मजदूरी तथा सिंचाई पर होने वाला खर्च लगातार बढ़ रहा है। ऐसी स्थिति में कम लागत वाली तकनीकों को अपनाना आवश्यक है।वर्तमान समय में कृषि उत्पादन की लागत लगातार बढ़ रही है, जिससे किसानों का लाभ कम हो रहा है। ऐसी स्थिति में कम लागत वाली वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाना आवश्यक है।

बीजोपचार

बीजोपचार (Seed Treatment) एक ऐसी सरल, सस्ती एवं प्रभावी तकनीक है, जिसके माध्यम से खरीफ फसलों की उत्पादन लागत को कम किया जा सकता है तथा अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। बीजोपचार में बुवाई से पूर्व बीजों को रासायनिक, जैविक या जैव उर्वरकों से उपचारित किया जाता है, जिससे बीज एवं पौधों को प्रारम्भिक सुरक्षा मिलती है।

बीजोपचार द्वारा लागत कम करने के उपाय

1. रोग एवं कीट नियंत्रण पर खर्च में कमी

खरीफ मौसम में नमी अधिक होने के कारण बीज एवं मृदाजनित रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है। यदि बीजों का पहले से उपचार कर दिया जाए तो अंकुरण अवस्था में रोगों और कीटों से सुरक्षा मिलती है। इससे बाद में महंगे फफूंदनाशकों और कीटनाशकों के छिड़काव की आवश्यकता कम हो जाती है।

3. अंकुरण प्रतिशत में वृद्धि

बीजोपचार से बीजों का अंकुरण बेहतर होता है और पौधों की स्थापना समान रूप से होती है। इससे दोबारा बुवाई की आवश्यकता नहीं पड़ती, जिससे बीज, श्रम एवं समय की बचत होती है।

3. उर्वरकों की आवश्यकता में कमी

दलहनी फसलों में राइजोबियम तथा अन्य जैव उर्वरकों से बीजोपचार करने पर पौधों को नत्रजन एवं फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है। इससे रासायनिक उर्वरकों की मात्रा कम करनी पड़ती है और लागत घटती है।

4. पौधों की प्रारम्भिक वृद्धि में सुधार

उपचारित बीजों से निकलने वाले पौधे अधिक स्वस्थ और मजबूत होते हैं। स्वस्थ पौधों में रोगों एवं प्रतिकूल परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता अधिक होती है, जिससे अतिरिक्त प्रबंधन खर्च कम होता है।

5. उत्पादन में वृद्धि

बीजोपचार से पौधों की संख्या, वृद्धि तथा स्वास्थ्य बेहतर रहता है, जिसके परिणामस्वरूप उपज में वृद्धि होती है। अधिक उत्पादन से प्रति इकाई उत्पादन लागत कम हो जाती है और किसान की आय बढ़ती है।

6. श्रम लागत में कमी

बीजोपचार के कारण रोग एवं कीट नियंत्रण के लिए बार–बार खेत में जाने और दवाओं के छिड़काव की आवश्यकता कम होती है। इससे मजदूरी तथा कृषि कार्यों पर होने वाला खर्च घटता है।

खरीफ फसलों में उपयोगी बीजोपचार

मूंगफली का बीजोपचार

मूंगफली का बीजोपचार करने के लिए एक हैक्टर क्षेत्रफल के लिए झुमकेदार किस्मों की बुआई के लिए 100 किलोग्राम बीज लें। कवकनाशी वीटावैक्स पाउडर 300 ग्राम दवा को 1 से 1.25 लीटर पानी में घोल बनाकर बीजों पर डालकर अच्छे से मिला दें और छायादार स्थान पर सुखा दें। इसके बाद 600 मि.ली. इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ एस दवा को 1.0 से 1.5 लीटर पानी में घोल बनाकर बीजों को इसमें अच्छी प्रकार से मिला दें। फिर सुखाकर अंत में राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने के लिए 300 ग्राम गुड को 2.5 लीटर गर्म पानी में घोल बनाकर कुछ समय ठ.डा होने के बाद 600 ग्राम राइजोबियम कल्चर को मिला दें। घोल को बीजों पर इस प्रकार मिलायें कि सभी बीजों पर इसकी एकसार परत चढ़ जाये। इसके बाद इन बीजों को छाया में सुखाकर बुआई के काम में लें।

बाजरे का बीजोपचार

प्रमुख अनाज वाली फसलों में बाजरा की फसल को विभिन्न बीजजनित रोगो जैसे अरगट या चेंपा रोग से बचाने तथा लवणीय क्षेत्रों में बुआई करने के लिए बीजोपचार का विशेष महत्व है। अरगट रोग (गुंदिया रोग से फसल के बचाव के लिए 20 प्रतिशत नमक के घोल से बीज को उपचारित करने के लि, 5 लीटर पानी

[1]श्री करण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर, राजस्थान
[2]भा. कृ. अनु. प. राष्ट्रीय पादप आनुवांशिकी संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली

में एक किलोग्राम – नमक मिलाकर बीजों को पांच मिनट तक डुबोकर रखें। इस घोल को फिर हिलाकर हल्के व तैरते हुए बीजों व कचरे को हटाकर नीचे बचे हुए बीजों को साफ पानी से धोकर छाया में सुखा दें। क्षारीय एवं लवणीय मृदा में बोने से पहले बाजरे के बीजों को 1 प्रतिशत सोडियम सल्फेट में 4 घंटे भिगोकर साफ पानी से धोकर छाया में सुखा दें। इसके बाद कवकनाशी से उपचारित करना चाहिए। कवकनाशी से उपचारित करने के लि, 3 ग्राम थाइरम से प्रति किलोग्राम बीज का उपचार करें। इसके बाद फसल को दीमक एवं सेफद लट से बचाने के लि, इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ एस 8.75 मि.ली. दवा को प्रति किलोग्राम बीज के लि, आवश्यकतानुसार पानी में घोल बनाकर बीजों पर समान रूप से छिड़काव करें। बीजों को छायादार स्थान पर सुखा दें। अंत में बाजरे के बीजों को एजेटोबैक्टर एवं पी.स.बी. कल्चर से उपचारित करने के लि, 500 मि.ली. गर्म पानी में 250 ग्राम गुड का घोल बनाकर कुछ समय ठ.डा होने के बाद 600 ग्राम कल्चर मिलायें। इस मिश्रण को एक हैक्टर में बोये जाने वाले बीज पर इस प्रकार मिलायें कि सभी बीजों पर इसकी एकसार परत चढ़ जाये। इसके बाद बीजों को छाया में सुखाकर बुआई करें।

मूंग का बीजोपचार

खरीफ मौसम की मुख्य दलहनी फसलों में मूंग एक महत्वपूर्ण फसल है। एक हैक्टर में बुआई के लिए लगभग 20 किलोग्राम बीज पर्याप्त होते हैं। मूंग के बीजोपचार के लि, अन्य लैग्युमिनेसी फसलों की तरह 3 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीजों को आवश्यकतानुसार पानी में घोल बनाकर बीजों को अच्छी तरह मिला दें एवं छायादार स्थान पर सुखा दें। सूखने के बाद राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने के लि, 1 लीटर गर्म पानी में 125 ग्राम गुड़ का घोल बनाकर ठ.डा होने के बाद 600 ग्राम राइजोबियम कल्चर मिलायें। इसको बीजों पर इस प्रकार मिलायें कि सभी बीजों पर इसकी , एकसार परत चढ़ जाये। इसके बाद बीजों को छाया में सुखाकर बुआई के काम में लें। किसान भाइयों को वैज्ञानिकों द्वारा विकसित तकनीकी का सही विधि से उपयोग करना चाहिए। किसी भी तकनीक को सही विधि से उपयोग नहीं करने पर उचित परि.ााम नहीं मिलते हैं। अतः बीजोपचार से भी उचित परिणाम एवं अधिक उत्पादन लेने के बताये अनुसार सही विधि का प्रयोग करना चाहिए जिससे उत्पादन एवं आय में वृद्धि हो सके।

ग्वार का बीजोपचार

अंगमारी रोग की रोकथाम के लिए बुवाई करने से पहले प्रति किलोग्राम बीज को 250 पीपीएम एग्रीमाईसीन (1 ग्राम 4 लीटर पानी) के घोल में डेढ घंटे भिगोकर उपचारित करें। ग्वार में जड गलन रोग के नियंत्रण के लिए बीज को कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्ल्यूपी 2 ग्राम प्रति किलो की दर से बीजोपचार करें। राइजोबियम कल्चर से उपचारित करने के लि, 1 लीटर गर्म पानी में 250 ग्राम गुड़ का घोल बनाकर ठ.डा होने के बाद 600 ग्राम राइजोबियम कल्चर मिलायें। इसको बीजों पर इस प्रकार मिलायें कि सभी बीजों पर इसकी एकसार परत चढ़ जाये। इसके बाद बीजों को छाया में सुखाकर बुआई के काम में लें।

उड़द व अन्य खरीफ दलहन

इनकी बुवाई से पहले बीज को 3 ग्राम थाइरम या 1 ग्राम कार्बेण्डाजिम से प्रति किलो की दर से उपचारित करें फिर राइजोबियम कल्चर मिलायें। इसके बाद बीजों को छाया में सुखाकर बुआई के काम में लें।

सावधानियां

- बीजोपचार हमेशा बीज उपचारित करने वाली मशीन में या ढोल या मटकी में डालकर करें।
- बीजोपचार सदैव सही क्रम से ही करें।
- इस प्रक्रिया के बाद तुरन्त बुआई कर दें।
- बंद कमरे में यह प्रक्रिया न करें, खुली जगह पर करें।
- उपचार के समय हाथों में दस्ताने व मुंह पर मास्क या कपड़ा बांधें।
- जिस व्यक्ति के हाथ में घाव या खराचें हों, उसे बीज उपचारित नहीं करना चाहिए ।
- प्रक्रिया समाप्त होने के बाद हाथ, पैर तथा मुंह को साबुन से धोकर स्नान कर लेना चाहिए।
- दवा के खाली डिब्बे व बोतलें नष्ट कर दें।

बीजोपचार से लाभ कैसे बढ़ता है?

अधिक उत्पादन

स्वस्थ बीजों से मजबूत पौधे विकसित होते हैं, जिससे फसल की वृद्धि अच्छी होती है और उपज में वृद्धि होती है।

बेहतर गुणवत्ता

रोगमुक्त एवं स्वस्थ फसल से प्राप्त उपज की गुणवत्ता अच्छी होती है, जिससे बाजार में बेहतर मूल्य मिलता है।

जोखिम में कमी

बीजोपचार फसल को प्रारम्भिक अवस्था में सुरक्षा प्रदान करता है, जिससे फसल खराब होने का खतरा कम होता है।

अधिक शुद्ध लाभ

जब उत्पादन बढ़ता है और लागत कम होती है, तो किसान का शुद्ध लाभ स्वतः बढ़ जाता है।

बुवाई से पूर्व मूंग के बीजोपचार का महत्व: स्वस्थ फसल एवं अधिक उत्पादन की कुंजी

महाजन उमेश विशाल[1], डॉ. वीर सिंह[2], प्रकाश कुमार[3], पूनम[4]

मूंग भारत की प्रमुख दलहनी फसलों में से एक है। यह प्रोटीन का महत्वपूर्ण स्रोत होने के साथ–साथ भूमि की उर्वरता बनाए रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। राजस्थान, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक तथा अन्य राज्यों में इसकी बड़े पैमाने पर खेती की जाती है। मूंग की खेती कम अवधि में अधिक लाभ देने वाली फसल मानी जाती है, लेकिन अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए फसल की शुरुआत स्वस्थ बीजों से होना आवश्यक है। अक्सर किसान उन्नत किस्मों एवं उर्वरकों पर ध्यान देते हैं, परंतु बुवाई से पूर्व बीजोपचार जैसी महत्वपूर्ण तकनीक को नजरअंदाज कर देते हैं। बीजोपचार कृषि की एक ऐसी वैज्ञानिक एवं कम लागत वाली तकनीक है, जिसके माध्यम से बीजों को फफूंदनाशकों, कीटनाशकों तथा जैव उर्वरकों से उपचारित किया जाता है। यह उपचार बीजों को रोगों एवं कीटों से सुरक्षा प्रदान करता है तथा अंकुरण और पौधों की प्रारंभिक वृद्धि को बेहतर बनाता है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार बीजोपचार से मूंग की उपज में 10 से 25 प्रतिशत तक वृद्धि संभव है।

बीजोपचार क्या है?

बुवाई से पहले बीजों को विभिन्न रासायनिक अथवा जैविक पदार्थों से उपचारित करने की प्रक्रिया को बीजोपचार कहा जाता है। इसका उद्देश्य बीजों को रोगजनकों, मृदा जनित फफूंदों एवं कीटों से सुरक्षा प्रदान करना तथा पौधों को प्रारंभिक अवस्था में स्वस्थ विकास के लिए आवश्यक वातावरण उपलब्ध कराना है।

मूंग में बीजोपचार की आवश्यकता क्यों?

मूंग की फसल में अनेक रोग एवं कीट प्रारंभिक अवस्था में ही नुकसान पहुंचाना शुरू कर देते हैं। कई बार किसान खेत में पर्याप्त मात्रा में बीज बोते हैं, लेकिन अंकुरण कम होने के कारण पौधों की संख्या घट जाती है। इसका प्रमुख कारण बीज एवं मृदा जनित रोग होते हैं।

बीजोपचार के प्रमुख लाभ–

- बीजों का अंकुरण प्रतिशत बढ़ता है।
- पौधों की संख्या समान एवं संतुलित रहती है।
- जड़ गलन एवं अन्य रोगों से सुरक्षा मिलती है।
- पौधों की प्रारंभिक वृद्धि तेज होती है।
- पौधे अधिक स्वस्थ एवं मजबूत बनते हैं।
- रासायनिक दवाओं की आवश्यकता कम होती है।
- उत्पादन एवं गुणवत्ता में सुधार होता है।
- कृषि लागत में कमी आती है।
- पर्यावरण अनुकूल खेती को बढ़ावा मिलता है।

मूंग में प्रमुख बीज एवं मृदा जनित रोग–

1. जड़ गलन– प्रभावित पौधों की जड़ें काली पड़ जाती हैं और पौधे सूखने लगते हैं।

2. कॉलर रॉट– इस रोग में पौधे का तना भूमि की सतह के पास सड़ जाता है, जिससे पौधा गिरकर मर जाता है।

3. डैम्पिंग ऑफ– यह रोग अंकुरण के तुरंत बाद पौधों को प्रभावित करता है और बड़ी संख्या में पौधे नष्ट हो जाते हैं।

4. सूखा रोग– अधिक तापमान एवं नमी की कमी की स्थिति में यह रोग गंभीर रूप से फैलता है।

इन सभी रोगों से बचाव के लिए बीजोपचार सबसे प्रभावी एवं आर्थिक उपाय माना जाता है।

फफूंदनाशी द्वारा बीजोपचार– बीजों को फफूंदनाशी दवाओं से उपचारित करने से बीज एवं मृदा जनित रोगों से सुरक्षा मिलती है।

अनुशंसित दवाएं–

कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू पी	2 ग्राम प्रति किग्रा बीज
थिरम 75 डब्ल्यू पी	3 ग्राम प्रति किग्रा बीज
कार्बेन्डाजिम + मैनकोजेब	2.5 ग्राम प्रति किग्रा बीज
ट्राइकोडर्मा विरिडे (जैव एजेंट)	10 ग्राम प्रति किग्रा बीज

उपचार विधि– बीजों को साफ तिरपाल या प्लास्टिक शीट पर फैलाएं। निर्धारित मात्रा में दवा मिलाकर बीजों को अच्छी तरह हिलाएं ताकि सभी बीजों पर समान परत चढ़ जाए। उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर बुवाई करें।

कीटनाशी द्वारा बीजोपचार– मूंग की फसल में थ्रिप्स, माहू, सफेद मक्खी एवं जेसिड जैसे रस चूसक कीट प्रारंभिक अवस्था में गंभीर नुकसान पहुंचाते हैं। इनके नियंत्रण हेतु बीजोपचार लाभकारी है।

[1,3,4]विद्यावाचस्पति, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
[2]आचार्य, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
ईमेल– umeshmahajan1511@gmail.com मो.नं.– 8888430724

अनुशंसित कीटनाशी–

इमिडाक्लोप्रिड 600 एफएस	5 मिली प्रति किग्रा बीज
थायमेथोक्साम 30 एफएस	10 मिली प्रति किग्रा बीज
फिप्रोनिल 5 एससी	2–4 मिली प्रति किग्रा बीज

लाभ–

- शुरुआती 20–30 दिनों तक कीटों से सुरक्षा।
- पौधों की बेहतर वृद्धि।
- वायरस रोगों के प्रसार में कमी।

दीमक नियंत्रण हेतु बीजोपचार– राजस्थान एवं अन्य शुष्क क्षेत्रों में दीमक मूंग की फसल का प्रमुख भूमिगत कीट है। यह बीज, अंकुर एवं जड़ों को खाकर पौधों को नष्ट कर देती है।

अनुशंसित दवा– फिप्रोनिल 5 – 6 मिली प्रति किलोग्राम बीज

लाभ–

- दीमक से प्रारंभिक सुरक्षा।
- बेहतर अंकुरण।
- पौधों की संख्या में वृद्धि ।
- पौध स्थापना में सुधार।
- जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप नियमित रूप से देखा जाता है, वहां यह उपचार विशेष रूप से लाभदायक है।

जैव उर्वरकों द्वारा बीजोपचार–

1. राइजोबियम कल्चर– मूंग दलहनी फसल है। इसकी जड़ों में गांठें बनती हैं जिनमें राइजोबियम जीवाणु रहते हैं। ये वायुमंडलीय नाइट्रोजन को पौधों के उपयोग योग्य रूप में परिवर्तित करते हैं।

मात्रा– 20–25 ग्राम राइजोबियम कल्चर प्रति किलोग्राम बीज।

लाभ–

20–40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर तक स्थिरीकरण।

यूरिया की आवश्यकता में कमी।

पौधों की हरित वृद्धि में वृद्धि।

उत्पादन में बढ़ोतरी।

2. पीएसबी– फॉस्फोरस पौधों के लिए आवश्यक पोषक तत्व है, लेकिन अधिकांश फॉस्फोरस मिट्टी में अविलेय रूप में उपस्थित रहता है।

मात्रा– 20–25 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज।

लाभ–

फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ती है।

जड़ विकास बेहतर होता है।

अधिक फूल एवं फलियां बनती हैं।

विधि– 10 प्रतिशत गुड़ के घोल (100 ग्राम गुड़ प्रति लीटर पानी) का हल्का घोल बनाकर बीजों पर छिड़कें। इसके बाद राइजोबियम एवं पीएसबी कल्चर मिलाकर बीजों पर समान रूप से चिपका दें। बीजों को छाया में 30 मिनट सुखाकर तुरंत बुवाई करें। ये जैविक उत्पाद रोगजनक फफूंदों को नियंत्रित करने में सहायक होते हैं।

जैविक खेती में बीजोपचार– जैविक खेती अपनाने वाले किसान रासायनिक दवाओं के स्थान पर निम्न जैविक विकल्पों का उपयोग कर सकते हैं।

1. ट्राइकोडर्मा विरिडे–10 ग्राम प्रति किग्रा बीज
2. स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस–10 ग्राम प्रति किग्रा बीज
3. नीम आधारित उत्पाद
4. जीवामृत एवं बीजामृत

बीजोपचार का सही क्रम–

1. फफूंदनाशी उपचार
2. कीटनाशी उपचार
3. राइजोबियम कल्चर
4. पीएसबी कल्चर

ध्यान रहे कि रासायनिक उपचार के बाद जैव उर्वरकों का उपचार लगभग 24 घंटे बाद किया जाना चाहिए।

बीजोपचार करते समय विशेष सावधानियां–

1. केवल प्रमाणित एवं स्वस्थ बीजों का उपयोग करें।
2. दवाओं की अनुशंसित मात्रा का ही प्रयोग करें।
3. बीजों को धूप में न सुखाएं।
4. उपचारित बीजों को पशुओं एवं बच्चों से दूर रखें।
5. जैव उर्वरकों की समाप्ति तिथि अवश्य जांचें।
6. बीजोपचार के बाद शीघ्र बुवाई करें।
7. हाथों में दस्ताने एवं मास्क का प्रयोग करें।

आर्थिक लाभ–

बीजोपचार पर प्रति हेक्टेयर बहुत कम खर्च आता है, जबकि इससे होने वाला लाभ कई गुना अधिक होता है। सामान्यतः बीजोपचार पर होने वाला खर्च कुल खेती लागत का 1 प्रतिशत से भी कम होता है, लेकिन यह उत्पादन में 10– 25 प्रतिशत तक वृद्धि कर सकता है। इसलिए इसे खेती का सबसे सस्ता एवं प्रभावी सुरक्षा उपाय माना जाता है।

निष्कर्ष–

मूंग की सफल खेती की नींव स्वस्थ एवं उपचारित बीजों पर निर्भर करती है। बीजोपचार एक वैज्ञानिक, सरल एवं अत्यंत लाभकारी तकनीक है जो फसल को प्रारंभिक रोगों एवं कीटों से बचाकर बेहतर अंकुरण, मजबूत पौधों की स्थापना तथा अधिक उत्पादन सुनिश्चित करती है। वर्तमान समय में जब खेती की लागत लगातार बढ़ रही है, तब बीजोपचार जैसी कम लागत वाली तकनीकों को अपनाकर किसान अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए प्रत्येक किसान को बुवाई से पूर्व बीजोपचार को अपनी खेती का अनिवार्य हिस्सा बनाना चाहिए।

मूंग में खरपतवार नियंत्रण की गैर-रासायनिक विधियाँ

डॉ. प्रदीप कुमार

मूंग, भारत में चना, अरहर और उड़द के बाद चौथी सबसे अधिक उत्पादित दलहनी फसल है। यह फसल खरीफ (बरसात) और गर्मी दोनों ऋतुओं में उगाई जा सकती है। इसकी कम अवधि वाली प्रकृति इसे पारंपरिक धान–गेहूं प्रणाली में अच्छी तरह फिट करती है और किसानों को अतिरिक्त आय प्राप्त करने में मदद करती है। मूँग एक लेग्युमिनस फसल होने के कारण 20–80 किग्रा/हेक्टेयर तक जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण में सक्षम है, जिससे यह कृषि प्रणाली की स्थिरता बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती है । इसके दाने में लगभग 22–28% प्रोटीन, 60–65% कार्बोहाइड्रेट, 1.0–1.5% वसा, 3.5–4.5% फाइबर और 4.5–5.5% ऐश होता है । साथ ही यह ल्यूसीन, आइसोल्यूसीन और ट्रिप्टोफेन जैसे सुगंधित अमीनो अम्लों का अच्छा स्रोत है ।

मूँग की फसल में खरपतवार, पोषक तत्वों के साथ–साथ, पानी, प्रकाश और स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे फसल की वृद्धि और उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ये खरपतवार प्राकृतिक रूप से अधिक सक्षम और प्रतिस्पर्धात्मक होते हैं और यदि समय पर नियंत्रण नहीं किया जाए तो ये उपज एवं आय की हानि का कारण बनते हैं। भारत में कृषि उत्पादन में होने वाली कुल वार्षिक हानियों में से सबसे अधिक हानि (45%) खरपतवारों के कारण होती है, इसके बाद कीट (30%), रोग (20%) और अन्य कारण (5%) आते हैं । यक आँकलन के अनुसार देश की 10 प्रमुख फसलों में अकेले खरपतवारों से लगभग 11 अरब अमेरिकी डॉलर (USD) की वास्तविक आर्थिक नुकसान होता हैं ।

इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि यदि खरपतवारों का समय पर और प्रभावी प्रबंधन नहीं किया जाए, तो मूँग की उपज में 30% से अधिक की कमी हो सकती है। इसके अलावा, उपज की गुणवत्ता पर भी खरपतवारों का नकारात्मक प्रभाव पड़ता है । उचित खरपतवार प्रबंधन के लिए खेत मे उपस्थित खरपतवार की गंभीरता, फसल की अवस्था, संसाधनों की उपलब्धता आदि पर निर्भर करती हैं । मूंग में खरपतवार नियंत्रण के लिए रासायनिक और गैर–रासायनिक दोनों विधियाँ अपनाई जाती हैं। कई गैर–रासायनिक विधियों में भूसा मल्च का उपयोग, पंक्ति दूरी में परिवर्तन या कमी, बुवाई की विधि, जुताई की पद्धति, सिंचाई और उर्वरकों की मात्रा और आवृत्ति, हाथ से निराई की समयावधि, फसल प्रणाली या फसल चक्र आदि शामिल हैं ।

खरपतवार प्रबंधन का महत्व

मूंग की सफल खेती के लिए खरपतवार प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में इसकी वृद्धि धीमी होती है, जिससे खरपतवार तेजी से बढ़ते हैं और पानी एवं पोषक तत्वों के लिए फसल के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं। इसके अलावा, वे प्रकाश और स्थान की उपलब्धता को भी सीमित करते हैं। अधिकांश खरपतवार मूंग की तुलना में जल्दी परिपक्व हो जाते हैं और बीज गिराकर मिट्टी में खरपतवार बीज भंडार को बढ़ा देते हैं, जिससे भविष्य में खरपतवारों की संख्या और बढ़ जाती है। खरपतवारों के बीज फसल की उपज में मिलकर अर्थिक मूल्य को घटा देते हैं और नई जगहों पर खरपतवारों के प्रसार का कारण बनते हैं। कांटेदार खरपतवार जैसे भांकड़ी (Tribulus terrestris) के कारण खेत में कार्य जैसे निराई–गुड़ाई और कटाई करना कठिन और धीमा हो जाता है, जिससे किसानों को अतिरिक्त आर्थिक हानि होती है।

खरपतवार प्रतियोगिता की गंभीर अवधि

फसल की पूरी वृद्धि अवधि में खरपतवार उपस्थित रहते हैं, लेकिन ऐसी विशिष्ट अवधि होती है जब खरपतवारों की उपस्थिति से सबसे अधिक उपज हानि होती है। इस अवधि को खरपतवार प्रतियोगिता की गंभीर अवधि (Critical Period of Weed Competition) कहा जाता है। यह वह न्यूनतम समय है जिसमें खरपतवार प्रबंधन करने से उपज वैसी ही मिलती है जैसी कि पूरी फसल अवधि में खरपतवार मुक्त खेतों से मिलती है। एक अध्ययन के अनुसार मूंग में खरपतवार प्रतियोगिता की गंभीर अवधि

सहायक प्रोफेसर– शस्य विज्ञान, कृषि संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

बुवाई के 3 से 6 सप्ताह बाद की मानी गई है लेकिन 30 दिनों तक खरपतवारों को बढ़ने देने पर उपज में महत्वपूर्ण कमी देखी गई। अतः 20–30 दिन अंकुरण के बाद की अवधि सबसे महत्वपूर्ण है। एक अन्य अध्ययन के अनुसार ग्रीष्मकालीन मूंगफली में 15–30 दिन बुवाई के बाद की अवधि खरपतवार प्रतियोगिता की गंभीर अवधि है जबकि, 40 दिन तक खरपतवार मुक्त वातावरण बनाए रखने से खरपतवार जैवभार में उल्लेखनीय कमी देखी गई, जिसका कारण मूंग की कैनोपी (canopy) के कारण मिट्टी की सतह ढक जाना और प्रकाश की कमी हो सकती है।

गैर–रासायनिक विधियों का खरपतवार पर प्रभाव :

(i) मल्चिंग (Mulching) का प्रभाव :

भूसे की मल्चिंग खरपतवार नियंत्रण में सहायक सिद्ध होती है। एक वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार 1 टन/हेक्टेयर चावल के भूसे की मल्चिंग से बिना मल्च वाले खेतों की तुलना में मूँग में खरपतवार जैवभार में महत्वपूर्ण कमी देखी गई । इसी प्रकार, 5 टन/हेक्टेयर भूसे की मल्चिंग से खरपतवार जैवभार में उल्लेखनीय कमी आई, हालांकि यह दो बार हाथ से निराई किए गए खेतों से अधिक हो सकता है । 25 दिनों बाद (DAS) की गई मल्चिंग से बिना मल्व वाले खेतों की तुलना में खरपतवार सूखी वस्तु की मात्रा में काफी कमी देखी गई । भूसे की मल्चिंग सूर्य की लाल प्रकाश तरंगों की तीव्रता को कम कर देती है, जिससे अधिकांश खरपतवारों का अंकुरण प्रभावित होता है क्योंकि उन्हें लाल प्रकाश की आवश्यकता होती है। मल्चिंग खरपतवार के अंकुरण में शारीरिक बाधा भी उत्पन्न कर सकती है। हालांकि, भूसे का संग्रह, भंडारण और मल्चिंग हेतु प्रयोग में काफी श्रम और लागत लगती है, जिससे इसका व्यापक रूप से उपयोग नहीं हो रहा। फिर भी, हैप्पी सीडर मशीन का उपयोग कर गेहूं की कटाई के बाद बचे भूसे में मूँग की बुवाई कर मल्च के रूप में उसका प्रयोग संभव है, जो जलाने से बेहतर विकल्प है।

2. जुताई (Tillage) का प्रभावः

जुताई मृदा की यांत्रिक प्रक्रिया है जो बीजों के अंकुरण और पौधों की स्थापन के लिए उपयुक्त परिस्थिति प्रदान करती है। मोल्डबोर्ड हल, रोटावेटर द्वारा की गई जुताई से टाइन कल्टीवेटर या चिजल हल, रोटावेटर की तुलना में खरपतवार की सूखी मात्रा में उल्लेखनीय कमी पाई गई । मोल्डबोर्ड हल से जुताई खरपतवार बीजों को गहराई में दबा देती है, जिससे उनका अंकुरण नहीं हो पाता। इसी अध्ययन में पाया गया छिड़काव विधि (219 ग्राम/मी2) से बुवाई करने पर खरपतवार का भार अधिक था, जबकि सीड ड्रिल से बुवाई करने पर यह मात्रा घटकर 176 ग्राम/मी2 रही। परंपरागत जुताई और फरो इरिगेटेड रेज्ड बेड (FIRB) विधियों से खरपतवार संख्या या जैवभार में कोई विशेष फर्क नहीं पड़ा । सबसे कम खरपतवार सूखी मात्रा गहरी जुताई में पाई गई। अतः गहरी जुताई और सीड ड्रिल से बुवाई द्वारा खरपतवार बीजों को गहराई में दबा कर तथा फसल के समान रूप से अंकुरण द्वारा खरपतवार नियंत्रण संभव है।

3. पंक्ति दूरी (Row Spacing) का प्रभाव :

विस्तृत पंक्ति दूरी 45 सेमी² 10 सेमी में 20 दिन बाद बुवाई (DAS) और 40 DAS पर खरपतवार की संख्या तथा 20 DAS और 40 DAS पर खरपतवार का सूखा भार S1 (30 सेमी × 10 सेमी) की तुलना में उल्लेखनीय रूप से अधिक पाया गया। इसका कारण यह हो सकता है कि अधिक पंक्ति दूरी (S2) में दो पंक्तियों के बीच अधिक स्थान उपलब्ध होता है, जिससे खरपतवार के अंकुरण और वृद्धि के लिए अधिक जगह मिलती है। इसके विपरीत, संकरी पंक्ति दूरी (30 सेमी × 10 सेमी) में फसल का 'स्मदरिक प्रभाव' (smothering effect) खरपतवार पर पड़ता है, जिससे खरपतवार की वृद्धि पर दमनकारी प्रभाव पड़ता है।' । लेकिन यदि पूरे फसल काल में खरपतवार बढ़ने दिया जाए, तो इस दूरी का असर नगण्य होता है। अतः पंक्ति दूरी केवल तब लाभकारी होती है जब अन्य खरपतवार प्रबंधन विधियों के साथ मिलाकर उपयोग किया जाए।

4. बीज दर (Seed Rate) का प्रभाव :

एक अध्ययन में यह पाया गया कि मूंगफली की फसल में 12–15 किलोग्राम/हेक्टेयर की बीज दर की तुलना में 18–20 किलोग्राम/हेक्टेयर की बीज दर ने प्रारंभिक 20–40 दिनों में खरपतवार घनत्व और सूखे भार को काफी हद तक घटाया। अधिक बीज दर के कारण खरपतवारों के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं बनतीं, जिससे उनकी वृद्धि बाधित होती है और फसल को बढ़ने का अच्छा अवसर मिलता है।

5. प्रजातियों (Genotypes) का प्रभाव

मूँग की विभिन्न किस्मों (genotypes) में खरपतवार को दबाने की क्षमता में अंतर पाया जाता है। उदाहरण के लिए, बांग्लादेश में 'BINA मूंग–5' ने 'BINA मूंग–8' और 'BARI मूंग–6' की तुलना में खरपतवार की सूखी मात्रा में उल्लेखनीय कमी दिखाई (Zahan et al-, 2016)। यह 'BINA मूंग–5' की बेहतर आरंभिक वृद्धि और स्थापन क्षमता के कारण हो सकता है, जिससे यह खरपतवार के साथ बेहतर प्रतिस्पर्धा कर पाता है।

6. सिंचाई व उर्वरक का प्रभाव (Effect of Irrigation and Fertilizer):

मूँग की फसल में दो बार सिंचाई करने पर सबसे अधिक खरपतवार सूखी मात्रा देखी गई, जो कि तीन और चार बार सिंचाई की तुलना में काफी अधिक थी। इसकी वजह यह हो सकती है कि सीमित सिंचाई की स्थिति में खरपतवारों की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता अधिक होती है और फसल की वृद्धि अवरुद्ध होती है, जिससे खरपतवार का विकास अधिक होता है। गोस्वामी et al- (2015) ने बताया कि उर्वरकों की अनुशंसित मात्रा (20 किग्रा नाइट्रोजन, 50 किग्रा फॉस्फोरस (P_2O_5), और 25 किग्रा पोटाश (K_2O)/हेक्टेयर) देने पर खरपतवार नियंत्रण दक्षता में गिरावट आई, जबकि खरपतवार सूचकांक (weed index) पर मिट्टी की उर्वरता का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसका कारण यह है कि उर्वरक न केवल फसल को पोषण देते हैं, बल्कि खरपतवारों को भी पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं, जिससे उनका जैवभार और प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता दोनों बढ़ जाती हैं।

7. फसल चक्र (Crop Rotation) का प्रभाव :

फसल चक्र का भी मूँग में खरपतवार के स्वरूप पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। कुछ फसल चक्र खरपतवार नियंत्रण में सहायक होते हैं, जबकि कुछ के कारण खरपतवारों की समस्या बढ़ जाती है। मूँग –सरसों फसल प्रणाली में फालो–मूँग चक्र की तुलना में 18% तक खरपतवार की सूखी मात्रा में कमी पाई गई (Singh, 2006)। इसके अलावा, ज्वार (Sorghum) की एलिलोपैथिक (Allelopathic) क्षमता विभिन्न खरपतवारों पर प्रभाव डाल सकती है। पाकिस्तान में किए गए एक अध्ययन में यह पाया गया कि ज्वार को 24 घंटे पानी में भिगोकर तैयार किए गए सॉरगाब (sorgaab) को 15, 30 और 45 दिनों बाद छिड़काव करने से Cyperus rotundus, Convolvulus arvensis और Portulaca oleracea की सूखी मात्रा में क्रमशः 50%, 60% और 75% की कमी आई, जबकि Trianthema portulacastrum पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा Kumar आदि (2020) ने रिपोर्ट किया कि मूंगफली (greengram) का रोटेशन अनाज फसलों (cereals) के साथ करने से घास वर्गीय खरपतवारों (grassy weeds) की सघनता (density) में उल्लेखनीय कमी आई तथा खरपतवार नियंत्रण दक्षता (weed control efficiency) में 35–40% तक की वृद्धि दर्ज की गई। इससे स्पष्ट होता है कि कुछ फसलों के अवशेष या अर्क खरपतवार नियंत्रण में जैविक विकल्प के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं।

निष्कर्ष

मूँग में खरपतवार नियंत्रण हेतु विविध किस्मों का चयन, उपयुक्त सिंचाई और उर्वरक प्रबंधन, तथा प्रभावशाली फसल चक्र अपनाना, गैर–रासायनिक विधियों के अंतर्गत अत्यंत उपयोगी सिद्ध होते हैं। इन रणनीतियों को एकीकृत करके अपनाने से खरपतवारों पर नियंत्रण संभव है, साथ ही फसल की उत्पादकता और संसाधन उपयोग दक्षता भी बढ़ाई जा सकती है। मूँग में गैर–रासायनिक खरपतवार नियंत्रण विधियाँ जैसे मल्चिंग, उचित जुताई, बीज दर में वृद्धि और पंक्ति दूरी का समायोजन, खरपतवार दबाव को प्रभावी रूप से कम कर सकती हैं। इन विधियों को एकीकृत रूप से अपनाने से किसानों को खरपतवार नियंत्रण में रसायनों पर निर्भरता कम करने में सहायता मिलती है और यह सतत कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

जुलाई माह के कृषि कार्य

डॉ. एन. के. शर्मा, निदेशक अनुसंधान
स्वा. के. रा. कृ. वि., बीकानेर

सस्य विज्ञान

सामान्यतः खरीफ फसलों को बोने का उपयुक्त समय वर्षा शुरु होने पर जून माह के अन्तिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह का है। सिंचाई सुविधा सुनिश्चित होने पर अगेती बुआई करना भी श्रेष्ठ है। फसल उत्पादन में बिना लागत वाली सस्य क्रियाओं का समावेश करना अत्यन्त लाभदायक है। जैसे कि प्रति हैक्टर निर्धारित पौधों की संख्या, बुआई का उपयुक्त समय उर्वरकों की उचित मात्रा, समय एवं उपयुक्त विधि से प्रयोग।

1 **बाजराः** (1) **बीज एवं बुआई** के लिये 4 किलोग्राम प्रति हैक्टर प्रमाणीकृत एवं उपचारित बीज लेंवें। कतार से कतार की दूरी 45–60 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15–20 से.मी. रखे। बीज 5 से.मी. से गहरा न डालें। **(2) उर्वरकः** सिंचित फलस के लिये 60 किलोग्राम नत्रजन तथा 40 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर उपयुक्त है। आधा नत्रजन तथा सम्पूर्ण फास्फोरस बुआई के समय ड्रिल कर 10 से.मी. गहराई पर डाले। शेष आधी मात्रा बुआई के 25–30 दिन बाद खड़ी फसल में डालें। **(3) बाजरे की उन्नत किस्मेंः**–(अ) एच.एच.बी.–67(60–62 दिन) (ब) एच.एच.बी.–60:(70–72 दिन) (स) एमपीएमएच–17 (द) राज–171 (एम.पी.–171) (य) आर.एच.बी.–90 (र) पूसा–605 (ल) आई.सी.एम.एच.–356 (व) आरएचबी–177 (श) एम. पी. एम. एच. –17, (स) एम. पी. एम. एच. –35, (ह) एम. पी. एम. एच. –42।

2. **मोठः–(1) बीज एवं बुआईः** शुद्धफसल हेतु 12 – 15 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टर बोएं। कतार से कतार की दूरी 30 से. मी. और पौधे से पौधे की दूरी 15–20 से.मी. रखें। **(2) उर्वरक :** मोठ की फसल के लिये 20 किलोग्राम नत्रजन तथा 32 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर पर्याप्त है। **(3) मोठ की उन्नत किस्मेंः** (अ) आर.एम.ओ.–2251 (ब) आर.एम.ओ.–435 (स) आर.एम.ओ.–423 (द) आर.एम.ओ.–40 (इ) आर.एम.ओ. –257, (य) काजरी मोठ–4, (र) काजरी मोठ–6।

3. **ग्वार** :–(1) **बीज एवं बुआईः** ग्वार फसल के लिये 24 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर सिंचित क्षैत्र के लिये तथा असिंचित क्षैत्र के लिये 16 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर डालें।कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखें।**(2) उर्वरकः**इस फसल में 20 किलोग्राम नत्रजन तथा 32 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर काम में लेवें।**(3) उन्नत किस्में** :(अ) एच.जी.–75(ब) आर.जी.सी.–936(स) आर.जी.सी. –197(द)आर.जी.सी.–986 (इ) आर.जी.सी.–1003 (फ) आर.जी. सी.–1017 (जी)आर.जी.सी.–1002, (एच) आरजीसी–1066, (आई) आरजीसी–1031 (जे) आरजीआर–12–1 (के) आरजीआर–18–1

4. **तिलः (1) बीज एवं बुआई** : बुआई का समय : 15 जून से 15 जुलाई । शाखाओं वाली किस्मों जैसे टाइप–13 व टी.सी. –25 हेतु 2 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर, कतार से कतार 35 से. मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. रखें। शाखा रहित किस्मों में कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखें। ऐसी किस्मों में बीज 4–5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर डालें। **(2) उर्वरक** : निश्चित वर्षा वाले क्षेत्र में 40 किलोग्राम नत्रजन तथा 30 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर दें। आधा नत्रजन तथा सम्पूर्ण फास्फोरस बुंआई के समय ड्रिल करें। शेष नत्रजन बुआई के 30–35 दिन बाद खड़ी फसल में देवें।

(3) उपयुक्त किस्में : (अ) आर.टी.–46 (ब) आर.टी.–125 (स) आर.टी.–127 (द) आर.टी.–351 (ड़) आर.टी.–372 ।

5. **मूँग :–(1) बीज एवं बुआई** : 15–20 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 से.मी. रखें।**(2) उर्वरक** : 20–25 किलोग्राम नत्रजन तथा 40 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर डालें।**(3) उन्नत किस्में**:(अ) एम.यू.एम.–2 (ब) आर.एम.जी.–62 (स) आर.एम.जी. 268 (द) एम. एच.–421 (इ) एस एम एल–668ए एम एच–1142, आई. पी. एम. – 99–125 (मेहा), आई. पी. एम. – 410–3 (शिखा) ।

6. **अरन्डी :–(1) उपयुक्त किस्मेंः** (अ) अरुणा (ब) आर.एच.सी. –1 (स) गोच–1 (द) जी.सी.एच.–4 (य) आरजीएच–5, (र) जी. सी.एच–7 **(2) बुआई का समय** : जुलाई का महिना।**(3) बीज की दर** : 3 किलोग्राम प्रति बीघा **(4)उर्वरकः** 80 किलोग्राम नत्रजन व 50 किलोग्राम फास्फोरस (प्रति हैक्टेयर) नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा बुआई पूर्व डालें। नत्रजन की शेष मात्रा दो भागों में प्रथम सिंचाई पर 35 दिन में व दूसरी 90 दिन पर देवें।(5) कतार से कतार की दूरी : 90 से.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 60 से.मी. रखें।

पौध व्याधि :–

बाजरा :– बाजरे की बुआई वर्षा के पश्चात् तुरन्त शुरु होनी है। इस फसल को अरगट (गुन्दिया) या चेपा रोग से बचाने हेतु

बुआई से पूर्व बीज को नमक के 20 प्रतिशत घोल (1 कि.ग्रा./5 लीटर पानी) में पॉच मिनट तक डूबोकर हिलायें। तैरते हुये बीज एवं कचरे को निकालकर जला दे। शेष बचे बीजों को साफ पानी से धोकर अच्छी तरह छाया में सुखा ले। तत्पश्चात् थाइरम नामक दवा 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज के हिसाब से बीजों को उपचारित कर बुआई करें, फसल चक्र अपनावें, समय पर बुआई करावें, देर से बुआई करने पर रोग अधिक लगता है। रोग के लक्षण बालियॉ आने की अवस्था पर ही देखे जा सकते है। यह रोग कलेविसेप्स फ्यूजीफार्मिस नामक कवक द्वारा फैलता है जो कि बीज, भूमि एवं कीटों द्वारा प्रसारित होता है।

मृदुरोमिल/तुलासिता रोग— यह रोग पौधे की छोटी अवस्था में ही देखा जा सकता है। दो तरह के लक्षण प्रकट होते है। प्रथम अवस्था में पत्तियों पर एवं बाद में बालियों पर दिखाई देता है। दानों की जगह हरी पत्तियॉ दिखाई देती है। पत्तियॉ आंशिक/पूर्णतः पीली या सफेद हो जाती है, देर से निकलने वाली पत्तियॉ पहले वाली पत्तियों की अपेक्षा अधिक पीली होती है, पत्तियों पर पीली धारिंया बन जाती है। नम वातावरण में रोगग्रस्त पत्तियों के निचले सिरे में आसिता के सफेद तंतु देखे जा सकते है। जुलाई माह के अन्तिम सप्ताह में यह लक्षण दिखाई दे जाते है। प्रथम संक्रमण मृदा में पड़े गत वर्ष के रोगग्रस्त पत्तों के कारण होता है। द्वितीय फैलाव वायु एवं कीटों द्वारा होता है। रोगजनक—स्कलेरोस्पोरा ग्रेमिनिकोला नामक कवक है।

रोकथाम :—(1) बुआई से पूर्व बीज को थाइरम 3 ग्राम या एप्रोन एस.डी. 6 ग्राम/किलो बीज की दर से उपचारित करें। (2) साफ एवं प्रमाण्ति बीज ही बोना चाहिये। (3) फसल चक्र अपनावें, (4) रोग के प्रथम लक्षण दिखाई पड़ने पर मैंकोजेब (डी.एम.—45) 2 ग्राम/लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। (5) रोग अवरोधक किस्में :— आर.सी.बी.—2, एम.एच.—179, एच.एच.बी.—67 डब्ल्यू.सी.सी.—75, राज—171।

मूंगफली :—(1) टिक्का रोगः—यह रोग सरकोस्पोरा एरेचिडीकोला एवं स.परसोनाटा नामक दो कवकों द्वारा फैलता है। रोग के लक्षण वातावरण में नमी, आद्रता बढ़ने पर देखें जा सकते है। दोनों कवकों के लक्षण भिन्न—भिन्न होते है।(अ) स. एरेचिडीकोला – अगेती पर्ण चित्ती, बड़े धब्बे, गोलाकर व अनियमित आकार, व्यास—1—10 एम.एम. ऊपरी सतह पर। **(ब)**स.परसोनाटा – पछेती पर्ण चित्ती, धब्बे छोटे, गोलाकार, व्यास 1—6 एम.एम. गहरे भूरे एवं काले रंग के, ऊपरी एवं निचली दोनो सतहों पर। कवक संक्रमण प्रायः बाहरी त्वचा की कोशिकाओं के वेधन अपग रन्ध्रों द्वारा प्रवेश से होता है। पछेती पर्ण चित्ती हानिकारक होती है। **रोकथामः**—प्रकोप शुरु होते ही मैंकोजेब 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर दो बार करें। अधिक नाइट्रोजन, फास्फोरस युक्त खाद देने से रोग बढ़ता है तथा पोटाश के प्रयोग से रोग की उग्रता में कमी आती है। **(2) शिखर विगलन, कालर रोट, क्राउन रोटः**—मृदोढ़ एवं बृजोढ़ बुआई के 20—30 दिन के अन्दर लगता है। यह रोग एस्परजीलस नाइजर नामक कवक द्वारा फैलता है। पौधा अचानक मुरझाकर मर जाता है। मुरझाये हुये पौधे को उखाड़ कर देखने पर तना जहां से भूमि से बाहर निकलता है। उस जगह काला पड़ जाता है तथा जड़े भी काली पड़ जाती है। रोकथाम :— खड़ी फसल में रोकथाम हेतु एम.ओ. पी. या जिंक सल्फेट 6 कि.ग्रा. प्रति बीघा की दर से बिखेर कर गुड़ाई करके सिंचाई करे या बुआई से 15 दिन पहले 1 किलो ट्राइकोड्रमा हरजिएनम प्रति बीघा की दर से 12—15 किलो सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर छाया में रख दें एवं बुआई के समय भूमि में मिला देवें एवं साथ ही 62.5 किलो अरण्ड की खल प्रति बीघा की दर से बुआई के समय भूमि में मिलायें एवं बुवाई के समय प्रति किलोग्राम बीज को 10 ग्राम ट्राइकोड्रमा हरजिएनम/बिरिडी पावडर से उपचारित कर बुवाई करने से इस रोग का अत्यधिक प्रभावी नियंत्रण पाया गया है। गर्मियों में खेत की गहरी जुताई कर खुला छोड़ने से इस रोग का प्रकोप कम पाया गया है।

(3) काली जड़ रोगः— मूंगफली में काली जड़ रोग के प्रभावी नियंत्रण के लिए गर्मी में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करें। बुवाई से पहले भूमि उपचार करें, 250 किलो गोबर की खाद में 04 किग्रा ट्राइकोड्रमा हरजिएनम मिलाकर भूमि को उपचारित करें। बुवाई के समय टेबुकोनाजोल 2 डी. एस. 1.5 ग्राम प्रति किलो बीज और PGPR (राइजोबैक्टीरिया) से बीज उपचारित करें। खड़ी फसल में 250 किलो गोबर की खाद 04 किलो ट्राइकोड्रमा हरजिएनम मिलाकर 35 व 70 दिन बाद भूमि में प्रयोग करें। (4) विल्ट या लिफ ब्लाइटः मूंगफली में विल्ट या लिफ ब्लाइट (समवित रोग) के नियंत्रण के लिए टेबुकोनाजोल 02 डी. एस. का 1.5 ग्राम प्रति किलो बीज से बीज उपचार तथा बीजाई के 30 दिन बाद 10 किलो ट्राइकोड्रमा हरजिएनम प्रति हैक्टर की दर से बुरकाव करें।

कपास एवं नरमाः—ब्लेक आर्म (जीवाणु अंगमारी) रोग :— जेन्थोमोनास मालवेशियरम नामक जीवाणु द्वारा होता है। सर्वप्रथम बीज पत्रों की निचली सतह पर छोटे जलीय धब्बे प्रकट होते है। ये धब्बे धीरे—धीरे बढ़कर अनियमित आकार के धब्बे बनाकर बीजपत्रों को सुखाकर नष्ट कर देते है। धब्बों का रंग भूरे से काला हो जाता है। बीजपत्रों को रोगग्रस्त करने के बाद तने को ग्रस्त करता हुआ पौधों की वर्धन—शिखा तक पहुँच जाता है। जिससे पौधे की मृत्यु हो जाती है। उग्र संक्रमण से तने पर गहरी काली दरारें पड़ जाती है। जिससे पौधे की मृत्यु हो जाती है एवं शाखाओं का रंग काला हो जाता है। **रोगचक्र** :— रोग का प्राथमिक निवेश द्रव्य कुछ घासों, रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों तथा रोगी बीजों के द्वारा मुख्य फसल में पहुँचता है। द्वितीयक निवेश द्रव्य का प्रसार वायु एवं पानी से होता है। टिण्डों के संक्रमण में कीट सहायक होते है। **रोकथाम** :— **(1)** खरपतवारों एवं रोगी अवशेषों को नष्ट करें। **(2)** फसलचक्र, देर से बुवाई, अच्छी

निराई–गुड़ाई, समय पर सिंचाई एवं मृदा में पोटाश का प्रयोग से यह रोग कम हो जाता है। **(3)** रोग के लक्षण दिखते ही 5–10 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन, 250–300 ग्राम सी.ओ.सी.(1000पी.पी.एम.) के घोल का छिड़काव 60 दिन, 80 दिन व 100 दिन बाद करना चाहिए।

नोट :– खड़ी फसल में जड़गलन के उपचारे हेतु प्रथम सिंचाई से पूर्व एम.ओ.पी. या जिंक सल्फेट 6 कि.ग्रा./बीघा की दर से बिखेर कर गुड़ाई करें तथा सिंचाई करें। **(2) लीफकर्ल विषाणु रोग** : लक्षण पत्तियों पर दिखाई पड़ते है। यह रोग जेमिनी वायरस द्वारा होता है। सफेद मक्खी, एफिड नामक दोनों कीट रोग फैलाने का कार्य करता है। रोकथामः लक्षण दिखाई पड़ते ही मेटासिस्टॉक्स 0.01 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर 2 बार करें। अथवा एसीफेट 1/.2 कि.ग्रा/है. का छिड़काव करें। किस्म आर.एस.–875 वायरस के प्रति अवरोधक है। देशी कपास में आर.जी.–8 उपयुक्त पाई गई है।

मूंग व मोठ :– जुलाई में बोये जाने वाले बीजों को 2 ग्राम थाइरम/किलो की दर से उपचारित करें। मोठ की उन्नत किस्में आर.एम.ओ.–40, 257 (विषाणुरोधी), मूंग की के.–851, एसएमएल–668 की बुवाई करावें।

ग्वार :–**(**1) जड़ सड़न रोग :– रोग के कारण पौधों की जड़े काली पड़ जाती है तथा पौधा छोटी अवस्था में ही मर जाता है। रोकथाम हेतु बुआई से पूर्व बीजों को थाइरम या टोपसीन एम.–2 ग्राम/किलो की दर से उपचारित करें।(2) अंगमारी अथवा झूलसा रोग :– जैन्थोमोनास जीवाणु जनित रोग, रोकथाम हेतु बुवाई से पूर्व प्रति कि.ग्रा. बीज को 250 पी.पी.एम. (2.5 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी) स्ट्रेप्टोसाइक्लीन के घोल में 2 घण्टे भिगोकर उपचारित करें।

तिल :– जड़ सड़न रोग से बचने हेतु बुआई से पूर्व थाइरम अथवा केप्टान 3 ग्राम/किलो बीज से उपचारित करें। जीवाणु अंगमारी से बचाने हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 2 ग्राम/10 लीटर पानी का घोल बनाकर बीज को उपचारित कर बुआई करें। किस्में–आर.टी.–103, 105, 46।

सब्जियों के रोग :– कुष्मांड कुल की सब्जियॉ–कद्दू, लौकी, ककड़ी, टिण्डा, तोरई आदि प्रमुख है।**(1) तुलासिता रोग** :– यह स्यूडोपेरेनोस्पोरा क्यूबेन्सीस नामक कवक द्वारा फैलता है। **रोकथाम** :– मैकोजेब–2ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव। **(2) झूलसा रोग** :– कवक अल्टरनेरिया कूकूमेरिना रोकथाम :– जाईनेव 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव। **(3) छाछिया रोग** :– कवक – एरीसाइफी साइक्रोरेसिएरम। **रोकथाम** :– केराथियान एल.सी.–1 मिली./लीटर पानी के घोल का छिड़काव। (4) **विषाणु या मोजेक रोग** :– यह सी.एम.वी. द्वारा फैलता है। एफिड सफेद मक्खी रोग का संचारण कर फैलाव करती है। फलस्वरुप पत्तियों पर पीले धब्बे पड़ जाते है। पत्तियां सिकुड़ जाती है। फल आकार में टेढ़े–मेढ़े व कम संख्या में बनते है।**रोकथाम** :– मेलाथियॉन 2 मिली/लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। (5) **जीवाणु पत्ती धब्बा रोग** :– यह रोग जेन्थोमोनास कम्पेस्ट्रीस नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। रोकथाम हेतु लक्षण दिखने पर ब्लाइटोक्स–50/सी.ओ.सी. नामक दवा का 3 ग्राम/लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें।

फलों के रोग :–कैंकर रोगः–रोगजनक जेन्थोमोनास सीटाई नामक जीवाणु से फैलता है। **रोकथाम**– रोपण से पूर्व कॉपर आक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव। लक्षण दिखने पर 250 मिली.ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन+3 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराइड का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 20 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।

अनार :– (1) **पत्ती धब्बा रोग** – जनक : अल्टरनेरिया अल्टरनाटा। **रोकथाम** – टोपसीन एम. 1 ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव।(2) **पत्ती मोडक/वरुथी रोग** – रोकथाम हेतु मेलाथियान 1 मिली./लीटर पानी के घोल का छिड़काव फल पकने से पूर्व करें।

ऑवला :–(1) फ्यूजेरियम विल्ट :– रोगग्रस्त पौधे मुरझाकर मरने लगते है। लक्षण दिखाई पड़ते ही विटावेक्स 2 ग्राम/लीटर पानी घोल में पौधे की निचली सतह पर पहुॅचावे।

(2) **रोली (रस्ट)** पत्तियों पर काले रोली के धब्बे बनते है फलों पर भी दिखाई पड़ते हैं रोगी फल पकने से पूर्व ही झड़ जाते हैं। **रोकथाम** :–ब्लाइटोक्स 1 ग्राम या घुलनशील गन्धक 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल का 20 दिन के अन्तराल पर 2 छिड़काव करें।

उद्यानिकी :–

फलोत्पादन :– नींबू वर्गीय पौधों में सूक्ष्म तत्वों की कमी से विभिन्न प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। जिसमें जस्ता, तॉबा, लोहा, बोरोन, मैंगनींज प्रमुख हैं। पौधों में सूक्ष्म तत्वों के दुष्परिणाम को रोकने के लिये जिंक सल्फेट 500 ग्राम, कॉपर सल्फेट 300 ग्राम, मैंगनीज सल्फेट 200 ग्राम, मैग्निशियम सल्फेट 200 ग्राम, बोरिक अम्ल 100 ग्राम, फेरस सल्फेट 200 ग्राम, बुझा हुआ चुना 900 ग्राम तथा 100 लीटर पानी का घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करें। इन तत्वों को पृथक–पृथक घोलने के बाद पानी में मिलना चाहिए। फल वृक्षों में आवश्यकतानुसार सिंचाई व निराई–गुड़ाई भी करनी चाहिये।

बेर के पौधों में 30 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी–गली खाद, 500 ग्राम यूरिया, 175 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा 250 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति पौधा देना चाहिए। यदि पौधे तैयार करने के लिए मूल स्तम्भ तैयार कर लिये है तो इन पर उन्नम किस्म की कलिकायन लगानी चाहिए।

अनार के पौधे में 40 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 250 ग्राम यूरिया, 1. 25 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट, 150 ग्राम म्यूरेट ऑफ पौटाश देवें। फल वृक्षों की सिंचाई व निराई–गुड़ाई आवश्यकतानुसार करें।

अनार की इस समय की फसल को बढ़ावा देवें।

सब्जी उत्पादन :– तैयार की गई फसल की नर्सरी की रोपाई करे। इसमें उपयुक्त खाद व उर्वरक की मात्रा मिलाने व उपयुक्त दूरी पर पौध रोपाई करें। बैंगन के लिये 150 कि.ग्रा. गोबर खाद, 40 कि.ग्रा. नत्रजन, 80 कि.ग्रा. फास्फोरस, 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से मिलावें व पौधरोपण 60 X 60 से.मी. पर करें। टमाटर के खेत में 150 कि.ग्रा. सड़ी–गली गोबर की खाद, 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 80 कि.ग्रा. फास्फोरस व 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दरे से मिलायें व पौध की रोपाई 75 X 75 से.मी. पर करें। मिर्च के लिये एक हैक्टर क्षेत्र में 150 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 70 कि.ग्रा. नत्रजन, 50 कि.ग्रा. फास्फोरस व 50 कि.ग्रा. पोटाश मिलाकर पौध रोपाई 60 X 45 से.मी. दूरी पर करे। रोपाई का कार्य सॉयकाल करना चहिये तथा रोपाई के पश्चात् तुरन्त सिंचाई करें।

ग्वार की बुआई हेतु पूसा नवबहार, दुर्गा बहार किस्म उत्तम है। एक हैक्टयेर क्षेत्र के लिये 15–20 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होगी। पौधों में दूरी 60 X 20 से.मी. रखें। 25 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस व 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से खेत में देवें।

चॅवले की बुआई हेतु पूसा बरसाती, पूसा दो फसली, पूसा ऋतुराज किस्में काम में लेवें। एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिये 12–15 कि.ग्रां. बीज पर्याप्त है। पौध दूरी 45 X 10 से.मी. रखें। ग्वार में दी गई उर्वरक मात्रा इस फसल में देवें।

कुष्माण्ड कुल की सब्जियों में इस जोन में प्रमुख रुप से लौकी, टिण्डा की खेती आसानी से की जा सकती है। इन सब्जियों के लिये किसम, बीज मात्रा, पौध दूरी व खाद–उर्वरक निम्न प्रकार है:–

फसल	किस्म का नाम	बीज की मात्रा	पौध दूरी	खाद एवं उर्वरक (प्रति हैं.)
लौकी	पूसा नवीन, पूसा मेघदूत, अर्कबहार	4–6 कि .ग्रा./है.	2.5X0.75 मी.	गोबर खाद 200–250 क्विंटल, नत्रजन 80–100 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 40 कि.ग्रा. पोटाश 50 कि.ग्रा.
तौरई	पूसा चिकनी, पूसा नसदार	4–5 कि.ग्रा./है.	2.5X0.75 मी.	
टिण्डी	बीकानेर ग्रीन, दिलपसन्द, एस.–86, हिसार सलेक्सन, अर्क टिण्डा	4–5 कि.ग्रा./है.	2.5X0.75 मी.	

भिण्डी की बुआई के लिए उन्नत किस्म पूसा सावनी, पूसा मखमली, परभनी क्रान्ति, अर्का अभय व अर्का अनामिका लेवें। खेत तैयारी के समय 150–200 क्विंटल गोबर खाद एक हैक्टर की दर से मिलावें। बिजाई से पूर्व 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 30 कि.ग्रा. फास्फोरस व 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर क्षेत्र में देवें। बीज की मात्रा 12–15 कि.ग्रा./हैं. पर्याप्त होती है। अच्छे अंकुरण हेतु बीज को बुआई से पूर्व 24 घंटे पानी में भिगो लें। लाईन से लाईन 30 से.मी. व पौधे से पौधे के बीच 15 से.मी. की दूरी रखें।

विशेश बिन्दू :–(1) फलदार वृक्षों की रोपाई के लिए कार्य योजना बनाना। (2) इच्छुक कृषकों को लेखांकन, फलदार वृक्ष, किस्म एवं पौधों की जानकारी देना।(3) कार्य योजना के अनुसार किस्म को नाम देना।

कीट विज्ञान

नरमा :– दूसरा छिड़काव :–समय : जुलाई के तीसरे सप्ताह से अगस्त का प्रथम सप्ताह। **कीट** : चेपा, सफेद मक्खी, हरा तेला। **रसायन** : डाइमेथोएट 30 ई.सी. या मेलाथियान 50 ई.सी. 60 लीटर पानी के साथ 300 मि.ली. कीटनाशी प्रयोग में लें। यदि चित्तीदार लट का प्रकोप हो तो मोनोक्रोटोफोस 36 एल.एल. 250 मिलीलीटर प्रति बीघा प्रति बीघा 60 लीटर पानी में घोलकर प्रयोग में लें।

देशी कपास :– दूसरा छिड़काव :– समय : जुलाई के अन्तिम सप्ताह से अगस्त के प्रथम सप्ताह तक। **कीट** : गुलाबी लट, चित्तीदार लट सायन : क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 250 मिलीलीटर प्रति बीघा प्रति बीघा 60 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

बाजरा :– बीजोपचार :– दीमक के बचाव हेतु क्लोरोपाइरीफोस 4 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें। या 10 x 10 मीटर की दुरी पर सुखी 2.5 फिट लम्बी बांस या सफेदे की लकड़ी गाडें व लकड़ीयों को 07 दिन के अन्तराल से बाहर निकालकर झड़काते रहें।

Printed and published by Dr. Deepali Dhawan on behalf of Nidesak Prasar Shiksha and Printed at M/s Kishan Enterprises, Magaram Colony, Outside Jassusar Gate, Bikaner and published at Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Bikaner, Editor : Prof. Rajesh Kumar Verma.